— तृतीय अध्याय —

हरिशंकर परसाई जी के निबन्धों में व्यंग्य

हरिशंकर परसाई के निबंधों में व्यंग्य

स्वातंत्र्यप्राप्ति के बाद के व्यंग्य लेखकों में हरिशंकर परसाईजी शिर्षस्थ व्यंग्यकार हैं। परसाई जी का संपूर्ण जीवन मार्क्सवादी चेतना से संपन्न व्यक्ति का जीवन हैं। वे अपने युग के अग्निधर्मा व्यंग्य निबंधकार हैं, जिन्होने राष्ट्र - जीवन की बहुरंगी समस्याओं को यथार्थतः अभिव्यक्ति प्रदान की हैं। वे एक जागरूक, सचेत, प्रगतिशील साहित्यकार हैं, जो साहित्य की परम्परागत लीक से बाहर आ कर साहित्य सर्जना करते रहे। उन्होने अनुभव किया हैं कि, मनुष्य का जीवन घुटन, टूटन और कुंठा से भरा हुआ हैं, जिसे परस्पर सहयोग से एकता में बदलना, अर्थवान बनाना जरूरी हैं। परसाई जी के व्यंग्य निबंधों का अध्ययन करते समय हमने देखा हैं कि जीवन जगत का कोई भी कोना इनके लेखन से नहीं छूटा। एक ओर व्यक्ति जीवन की विविधता की झलक मिलती हैं तो दुसरी ओर गहन गम्भीर राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं पर विचार - विमर्श। इन्होने मनुष्य जीवन को विनाश की सम्भावनाओं से बचाकर वर्तमान मनुष्य जीवन को अविनाशी, अमर एवं शाश्वत जीवन मुल्यों से भरा-पूरा बनाने का भरकस प्रयास किया हैं। व्यक्ति के जीवन में परिवर्तन लाकर पूरे समाज को एक नया आलोक देते समय संपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को ही बदलने की परसाई जी की मांग हैं। इसलिये तो उन्होने वर्तमान समाज की विसंगतियों को अपनी रचनाओं के माध्यम से बेबाकी ढंग से प्रस्तुत कर यथार्थवादी लेखन किया हैं।

साहित्यकार युग की आत्मा होती हैं। हर युग में पलनेवाले अंतर्विरोध अलग अलग रूप में देखने मिलते हैं। इन अंतर्विरोधों का अध्ययन करना तथा उससे तर्कपूर्ण और वैज्ञानिक अनुभवों की प्राप्ति करना संवेदनशील साहित्यकार का काम हैं। उसकी कलम युग और उसके समुचे माहोल की सच्चाइयों का पर्दाफाश करती रहती हैं। यही बात परसाई जी के व्यंग्य

लेखन में दिखाई देती हैं। समूची भारत भूमि पर सत्य, अहिंसा, शांती, परस्पर सहयोग, बंधुभाव, विश्व बंधुत्व के बीज नहीं उगा सकी बल्कि झूठ, पाखण्ड, विसंगति, अन्याय, चोरी, रिश्वतखोरी, डकैत, बलत्कार, साजिश, स्मगलिंग, मुनाफाखोरी, दुमुँहापन, अवसरवाद, कथनी और करनी में फर्क जैसे बबुल के पेड़ों की भरमार दिखाई देने लगी। जीवन के हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार पनप रहा, ऐसे समय परसाई हाथ-पर-हाथ धरे चूप नहीं बैठ सके।

परसाई जी एक ऐसे व्यंग्यकार रहे जिन्होंने जन साधारनों की आशा-आकांक्षा, जीवन-संघर्ष को नजदीक से देखा, परखा, अनुभव किया और बाद में अभिव्यक्त किया। व्यक्तिगत दुख के जाल से बाहर निकलकर परसाई जी ने लोक जीवन से तादात्म्य स्थापित किया। जीवन के हर क्षेत्र में पलनेवाले अन्तर्विरोधों को परसाई जी ने उसकी सम्पूर्ण इयत्ता में परखा हैं, विशेषत: राजनीतिक विसंगतियों को परसाई जी ने निर्ममता के साथ बेनकाब किया हैं। संपूर्ण मानवीय चेतना के साथ वे एकाकार हो जाते हैं। समाज की जिन्दादिली, साहस का स्थान अब कायरता एवं समझौतापरस्ती ने ले लिया हैं। जिसके कारण व्यक्ति/जीवन चरित्रहिन, अवसरवादी बन गया।

सत्ता के हस्तान्तरण में भारत को राजनीतिक आजादी मिली किन्तु विदेशियों द्वारा प्रसारित पूँजीवादी आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था का शोषण और दमन का तन्त्र बराबर चलता रहा। सामंतवाद का ह्रास और पूँजीवाद का उदय यह बदली हुअी सामाजिक स्थिति हैं। इस पूँजीवादी औद्योगीकरण ने वर्ग-संघर्ष और वर्ग-भेद को तीव्र बनाया, शोषण और मुनाफाखोरी जैसी प्रवृत्तियों को विशेष महत्व दिया। फर्क सिर्फ सत्ता के हस्तान्तरण का हैं, गोरे गए काले आए, परिणाम वही रहा। स्वतन्त्रतापूर्व भारतीय जनता विदेशी शासन के शोषण से त्रस्त थी और अब स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अपने ही नेताओं, बडे अधिकारी, व्यापारी वर्ग से। भौतिक और सामाजिक स्थितियों के परिवर्तन के परिणाम स्वरूप प्रत्येक सामाजिक स्थिति से जुडकर मनुष्य अपने विचारों में भी बदलाव लाता गया। मनुष्य के बीच बढ़ती हुअी

सामाजिक स्थितियों के अनुरूप आये अन्तर्विरोधों को परसाई जी ने अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया। आजादी के चालीस वर्षों के बाद भी भारतीय जनता मुक्ति-संघर्ष में जूझ रही हैं। गरीबी, भुखमरी, अकाल, भूकम्प से त्रस्त जनता समय समय पर अपना विरोध हड़ताल और आंदोलनों से व्यक्त कर रही हैं। नेताओं का एक वर्ग था जिसने स्वतंत्रता प्राप्त करने अपना सब कुछ हवन कर दिया था और अब स्वतंत्रता मिलते ही अपने देश में स्वार्थी, अवसरवादी, वैयक्तिक स्वार्थ के आगे देशहित को भूलनेवाले, किसी का भला न चाहनेवाले, पदलोलुप, चरित्रहीन नेता लोगों की भरमार दिखाई देती हैं। देश की आम जनता का मोहभंग हुआ जिसके परिणाम स्वरूप समाज में निराशा, क्रोध, आक्रोश एवं आवेश का जन्म हुआ। देश की सम्पूर्ण रूग्ण प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति परसाई के व्यंग्य लेखन में दिखाई देती हैं।

मैने परसाई जी के निम्नांकित कृतियों का अपने लघु शोध प्रबंध के लिए अध्ययन किया हैं — जिनमें प्रमुखतः "पगडण्डियों का जमाना", "सदाचार का ताबीज", "वैष्णव की फिसलन", "जैसे उनके दिन फिरे", "काग भगोड़ा", "सुनो भाई साधो", "अपनी अपनी बीमारी", "पाखंड का अध्यात्म" आदि। इन किताबों में से चौहत्तर निबंध मैने पढ़े, जिनमें आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं व्यक्तिगत जीवन में पलनेवाले अन्तर्विरोधों को परसाई ने अपने व्यंग्य लेखन का निशाना बनाया हैं। सामाजिक जीवन में पलनेवाले कितने ही ढकोसलों तथा विकृतियों को उजागर करनेवाले उनके निम्नांकित निबंध हैं, जिनमें कालाबाजारी, मुनाफाखोरी, मिलावटी व्यापार, स्मगलिंग, भुखमरी जैसी समस्याओं को उजागर किया हैं — "अन्न की मौत", "मिलावट की सभ्यता", "रामकथा क्षेपक", "अभाव की दाद", "वो जरा वाईफ हैं न", "अकाल-उत्सव" तथा "भूख मारने की जड़ी" आदि। बढ़ती हुई बेरोजगारी पर "इन्टरव्यू मुफतलाल का होना डिप्टी कलेक्टर", "पगडंडियों का जमाना", तथा "सज्जन, दुर्जन और कांग्रेसजन" आदि निबन्धों में प्रकाश डाला हैं। बढ़ती हुई लोकसंख्या को उजागर करनेवाले उनके निबंधों मे - "फेमिली प्लैनिंग", "त्रिशंकु बेचारा" तथा "एक तृप्त आदमी" आदि। समाज सेवी संस्थाओं में

चलनेवाले अनाचार पर व्यंग्य का प्रहार करनेवाले निबन्धो में — "हैंगु, आध्यात्म और लेखक", तथा "भारत सेवक - समाज" आदि। भारतीय समाज में महिलाओं के समस्याओं पर प्रकाश डालनेवाले निबन्धों मे — "आंगन में बैंगन," "दस दिन का अनशन", "तिसरे दर्जे के श्रध्देय", "मेनका का तपोभंग", "विज्ञापन में बिकती नारी" आदि तथा महिलाओं पर होनेवाले बलत्कार पर "हल्ला और कलंक का तंत्र" तथा "जैसे उनके दिन फिरे" आदि निबन्ध प्रकाश डालते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात इस देश के राजनीतिक जीवन पर उन्होने अनेक प्रकार से प्रहार किये है। राजनीतिक जीवन में व्याप्त पदलोलुपता, चरित्रहीनता, भ्रष्टाचार, व्याभिचार, स्वार्थ परायणता, भाई-भतीजेवाद, रिश्वतखोरी, जातीवाद, वोटों की कुत्सित राजनीति जैसी सभी विसंगतियों को परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया हैं, जिनमे "प्रजावादी समाजवादी", "तीसरे दर्जे के श्रध्देय", "हम, वे और भीड", "सज्जन, दुर्जन और कांग्रेसजन", "नया खून पूराना खून", "राजनैतिक पूँगी", "एक दिक्षांत भाषण", "असिस्टेंट लोकनायक", "महात्मा गांधी को चीठ्ठी पहूँचे", "हीनता का अतिराष्ट्रवाद", "दौड प्रधानमंत्री पद की", जैसे उनके दिन फिरे", "भेडे और भेडिये", "मेनका का तपोभंग", "सुदामा के चावल", "लंका विजय के बाद", "भारत को चाहिए: जादूगर और साधु" आदि निबन्धो में राजनीति की दूषित प्रवृत्तियों पर प्रहार किया हैं। देश की आजादी को लक्ष्य करनेवाले उनके निबन्धों में "हम, वे और भीड" तथा "बाँये क्यों चले" आदि हैं। शिक्षा-जगत में व्याप्त भ्रष्टाचार की पोल खोलनेवाले उनके निबंधों में "प्राइवेट कालेज का घोषणा-पत्र", "शिक्षकों का कल्याण", "बलिहारी गुरू आपकी", "एकलव्य ने गुरू को अंगूठा दिखाया", "पगडण्डियों का जमाना", "एक दिक्षांत भाषण" जैसे निबंधों में सार्वजनिक हित के कार्यो में भी अपना स्वार्थ देखनेवालों पर, उत्तर पुस्तिकाओं में नम्बर बढ़वाने वालो पर, अधापकों, विद्यार्थी तथा संस्था चालकों को परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया हैं। धर्म के नामपर

व्याप्त आडम्बरों, अन्धविश्वासों, कुरूढ़ियों, असंगतियों एवं अनाचारों पर तीखे व्यंग्य प्रहार "टार्च बेचनेवाला", "सदाचार का जुआ", "इस्लाम के कोडे", "अष्टग्रही योग आ गया", "कन्धे श्रवणकुमार के", "हरिजनों को पिटने का यज्ञ", "स्नान", "प्रेम की बिरादरी", "पाठकजी का केस", "भगत की गत", "बेईमानी की परत", "वैष्णव की फिसलन", "धोबन को नहि दीन्ही चदरिया", आदि व्यंग्य निबन्धों में किये हैं। तथा सांस्कृतिक जीवन में पलनेवाले अन्तर्विरोधों को "सांस्कृतिक हुल्लड", "वैष्णव की फिसलन", "मेनका का तपोभंग", विज्ञापन में बिकती नारी" आदि निबन्धों में परसाई जी ने लक्ष्य बनाया है। प्रशासनिक क्षेत्र को लक्ष्य बनानेवाले उनके निबंधों में —— "मक्खी मार सप्ताह", "सुदामा के चावल", "पगडण्डियों का जमाना", "हम, वे और भीड", "सदाचार का ताबीज", "कोहियावादी समाजवादी" आदि, तथा सरकार की नितियों पर व्यंग्य का प्रहार करनेवाले उनके निबंधों में — "सरकार चिंतित है", "जहरीली शराब", "सोने का साँप", "आँगन में बैंगन", "बकरी पौधा चर गई" आदि निबंध हैं। आर्थिक वैषम्य को उजागर करनेवाले उनके निबंधों में — "भारत को चाहिए: जादूगर और साधु", "अकाल-उत्सव", "ढँग, अध्यात्म और लेखक", "हस्ती मिटती नही हमारी", आदि हैं। पुलिस विभाग की काली करतुतों को "इन्स्पेक्टर मातादीन चांद पर", तथा "सोने का साँप" आदि निबन्धों में उजागर किया हैं।

परसाईजी ने राष्ट्रीय समस्याओं के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को "खुदा की चिडीया", तथा "मानव आत्मा और अमेरिकी हूटर" जैसे निबंधों में उजागर किया हैं। साहित्य के क्षेत्र में पलनेवाले अनाचार, अंतर्विरोधो को "इति श्री रिसर्चाय", "बेईमानी की परत", "हम, वे और भीड", "अपने अपने इष्टदेव", तथा "आधुनिकता का फैशन" नामक निबंधों में प्रकाश डाला हैं। इसके अतिरिक्त परसाईजी ने व्यक्ति के दोष दिखाने के लिए व्यक्तिगत व्यंग्य की निर्मिती की हैं, जिनमे "दु:ख" तथा "होनहार" नामक व्यंग्य लेखों का उदाहरण दिया जा सकता हैं। साथ ही परसाई जी ने आत्म व्यंग्य की भी

सृजना की, जिनमे -- "दो छोटी इच्छाइं", "बेईमानी की परत" प्रमुखतम् हैं। कहने का तात्पर्य यह हैं कि वर्तमान जीवन का सम्पूर्ण लेखा-जोखा पूर्णतः यथार्थ के साथ परसाई के निबन्धों में व्यक्त हुआ हैं। परसाई का सम्पूर्ण लेखन हमारे आस-पास के वर्तमान जीवन का यथार्थ हैं।

इसे विड़म्बना नही तो क्या कहे कि स्वतंत्रता के बाद जीवन के हर कोने में भ्रष्टाचार का बोलबाला दिखाई देने लगा। स्वतंत्रता के बाद देश को बीमारी-सी लग गई। शिक्षा तथा धर्म का क्षेत्र भी इससे अछूता नही रहा। सभी अनैतिक बन बैठे। जिसके पास हैं, वह भी रोता हैं, और जिसके पास नही, वह भी रोता हैं। "अपनी अपनी बीमारी हैं। इसलिये परसाई जी ने अपने देश के सज्जनों को देश की बरबादी का गीत सुनाया, उसे बार बार दोहराया। प्रथम व्यंग्य रचना "सुनो भाई साधों" का सृजन किया। परमार्थ से हीन, बुजदिल इन्सानें के हृदय में शक्ति भरने के लिए परसाई जैसा कबीर इस भूमि पर पैदा हुआ। लेकिन देश के सज्जन दिन-ब-दिन बरबादी की ओर चलते रहें, "उनके तो जैसे दिन ही फिर गये थे। अपने बच्चों को सफलता का रहस्य मिल गया, जो चिज सड़क पर हो उसे घर उठा ले आओ, वह इस जमाने में सफल हो जायेंगा। कोई सीधे रास्ते से नही चलता, पगडंडि पकडते हैं। "पगडंडियों का जमाना आ गया" और देश के सज्जन "सदाचार का ताबीज" बाँटने लगे। देश का हर एक व्यक्ति राक्षसी हरकतों से मानवता का गला घोंठ रहा हैं। नौकरी के सिलसिले में सच्चरित्रता का सर्टीफिकेट बाँटनेवाले इस देश के प्रतिष्ठीत, सभ्य नागरीक ने अबला नारी को पहले अपनी अंकशायिनी बनाना चाहा और फिर देना चाहा, "चरित्र प्रमाण पत्र"। अपने देश के कर्णधार "पुराने कैलेण्डर" देशवासियों को उपहार स्वरूप भेंट देते हैं और भोली-भाली जनता इन रंगीन तस्वीरों को देखकर मन बहलाती हैं लेकिन समय का कैलेण्डर बदलता रहता हैं, कितना बडा धोखा हैं जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हम देते हैं। साधो, अपने देश में एक परम्परा हैं, जो दस ट्रक अनाज चुराता हैं, उसे चुपचाप शहर के बाहर बेखटके जाने दिया जाता हैं लेकिन जो दस किलो

अनाज पुराना है उसे जेल भेज दिया जाता है, जूठन चुराकर खानेवाले घटिया कुत्ते ही पिट रहे हैं, अलसेसियन पर लाठी चलाने की किसी में भी हिम्मत नही हैं। जनतंत्र में पुलिस की भूमिका इंस्पेक्टर मातादीन से बढ़कर कतई नही जो चन्द्रलोक वासियों को सभ्यता की ट्रेनिंग दिलवाना है। "सुदामा के चावल" व्यंग्य लेख में शासन चरित्र की ओर इशारा हैं तो "रामकथा-क्षेपक" उस चरित्र का पर्दाफाश करते हैं। स्मगलिंग वैसे अनैतिक है पर स्मगल किये हुये माल से अपने या अपने रिश्तेदारों का फायदा होता है, तो वह काम नैतिक बन जाता है। वस्तुतः सच और झूठ में कोई खास फर्क नही रह गया। आज सभी बिक रहे हैं लेकिन अलग अलग ढ़ंग से सभी बिक रहे हैं। बन्नू स्वतंत्र भारत का आजाद पुरूष है, वह कायस्थ राधिका प्रसाद की पत्नी सावित्री को अपनी अंकशायिनी बनाना चाहता हैं। अपनी पत्नी बनाना चाहता है। कानून से वह बात कतई संभव नही है किन्तु बाबा सनकीदास जैसे लोग "अनशन" जैसे पवित्र अस्त्र से अपने मकसद में कामयाब हो जाते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में द्रोणाचार्य अर्जुन को श्रेष्ठ साबित करने एकलव्यों के अंगुठे कटवा रहे हैं। इन पाखण्डीयों का अध्याय जितना सुनाये उतना कम है, "पाखण्ड का अध्यात्म"। परसाई इन सभी पाखण्डी कृत्यों को भगाना चाहते हैं, "काग भगोडा"। लेकिन क्या कहे, भगवन् विष्णु के भक्त वैष्णवजन होटलों में चोरी-छुपके गोस्त, कैबरे तथा औरत का धंधा चलाते हैं, "वैष्णव की फिसलन"। परसाई का समुचा साहित्य युग का दर्पन हैं। इसलिये तो हम कह सकते हैं कि परसाई ने समाज और व्यवस्था के अन्तर्विरोधों को पकडने के लिए लड़ाई लड़ी। उन्होने व्यक्ति, समाज, और राष्ट्र की उलझी हुअी व्यवस्था से विद्रूपता, विसंगति, पाखण्ड, झूठ, फरेब आदि को सामने लाया। इन्ही विसंगतियों को आगे हम विस्तार से देखेंगे।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे समाज में परिवर्तन की गति अपेक्षाकृत अधिक दिखाई देती है क्योंकि एक ओर समाज व्यवस्था बदली है, तो दूसरी ओर नये-नये वैज्ञानिक अविष्कारों, औद्योगीकरण आदि के कारण व्यक्ति की विचारधाराओं में परिवर्तन हुआ हैं। आर्थिक विषमता ने समाज

को निरन्तर टूटने में काफी मदद की है। समाज में बढ़ती हुई बेकारी, कुण्ठा, अनास्था, कटुता, द्वेश इन सभी ने व्यक्ति व्यक्ति के बीच की खाई को बढ़ावा दिया है। आज का व्यक्ति व्यापक सामाजिक हित के स्थान पर व्यक्ति - हित को ज्यादा महत्व देता है। आज समाज में पूराने आदर्श, पुरानी मान्यताएँ, संस्कार, आस्थाएँ आदि सभी तेजी-से टूट रही हैं, दूसरी ओर नवीन विचारधाराओं और मान्यताओं को पूरी तरह स्वीकार करने के लिए हमारा समाज तैयार नहीं हो पाया है। नयी पीढ़ी हर क्षेत्र में पुरानी पीढ़ी से संघर्ष कर ही है। राजनेताओं ने अपने स्वार्थ के लिए समाज के हर वर्ग में जाँति पाँति साम्प्रदायिकता का जहर फैलाया जिससे अराजकता और अनुशासनहीनता की स्थितियाँ तेजी-से पनप रही। पाश्चात संस्कृति का प्रभाव समाज के सभी वर्गों पर पड़ा। पश्चिम की भोगवादी संस्कृति और नग्न सभ्यता ने हमारे युवा पीढ़ी को अपनी ओर आकृष्ट किया। परिणाम स्वरूप हमारा समाज विघटन के भयंकर दौर से गुजर रहा है। हर समाज में विसंगतियाँ दिखाई देनी लगी। इन विसंगतियों को स्वातन्त्रोत्तर, व्यंग्यकारों ने अभिव्यक्ति प्रदान की है। समाज में व्याप्त कुरीतियाँ, रूढ़ियाँ, असंगति, सामाजिक भ्रष्टाचार, मुनाफाखोरी जैसी कितनी ही समस्याओं की ओर संकेत किया जा रहा है।

व्यंग्य तो परसाई जी के रचना सृजन का प्राण है। अपने व्यंग्य रचनाओं से परसाई जी ने कितनी ही सामाजिक विसंगतियों को अभिव्यक्ति दी है। अपने व्यंग्य निबंधों के माध्यम सें परसाई जी ने मुनाफाखोरी, कालाबाजारियों, भ्रष्टाचारियों का पर्दाफाश किया है। प्रस्तुत निबंध "अन्न की मौत" के माध्यम से परसाई जी ने भुखमारी की समस्या को सामने रखा है, भारत की दुर्दशा को वाणी दी है। साधारण आदमी की विवशता, निष्क्रियता को सामने रखा है। ऐसे कितने ही लोग हैं, जो बिना खाये, कितनी ही राते गुजार देते हैं। दिनभर काम करके एक वक्त की रोटी नसीब नहीं होती। संसार रूपी चक्की में पिसनेवाली मनुष्यता के दुःख दर्द का परिचय परसाई जी ने

दिया है। मुनाफाखोर, कालाबाजारियों, भ्रष्टाचारियों की पोल खोलते हुए परसाई जी लिखते हैं ;

" सब कहीं यही हाल है। मुझे सहसा राष्ट्र की एकता का बोध होता है। हे भारत भाग्य विधाता, पंजाब, सिंध, गुजरात, मराठा, द्राविड उत्कल बंग — सब जगह अन्न को मारकर दफन दिया गया। कोटी - कोटि नर-नारी अन्न संकट के सूत्र में बाँधकर एक हो गये हैं। भूखमरी और भ्रष्टाचारी हमारी राष्ट्रीय एकता के सबसे ताकतवर तत्व बन गये हैं। धर्म, संस्कृति और दर्शन कमजोर पड गये हैं। कैसी अद्‌भूत एकता है। पंजाब का गेहूँ गुजरात के कालाबाजार में बिकता है और मध्यप्रदेश का चावल कलकत्ता के मुनाफाखोर के गोदाम में भरा है। देश एक है। कानपूर का ठग मदुराई में ठगी करता है, हिन्दीभाषी जेबकतरा तमिलभाषी की जेब काटता है और रामेश्वरम् का भक्त बद्रीनाथ का सोना चुराने चल पड़ा है। सब सिमाऐं टूट गयी। अब जरूरी नहीं है कि हैदराबाद का रेड्डी वही भूखा मरे। वह पटना में भी मर सकता है, क्योंकि देश एक है। मुनाफाखोरी, काजाबाजारियों, भ्रष्टाचारियों ने मिलकर राष्ट्र को एक कर दिया है। " [१]

कितनी विसंगत परिस्थिती है कि एक ओर अनाज की स्मगलिंग हो रही है, साठेबाजी करके व्यापारी वर्ग मुनाफे में काफी मात्रा में वृध्दि कर रहा है तो दुसरी ओर देश की लाखो, करोडों आम जनता एक वक्त के भोजन के लिए मोहताज बनी है। व्यापारी वर्ग ने "मिलावटी सभ्यता" को अपनाया है। प्रस्तुत निबंध "मिलावट की सभ्यता" में परसाई जी ने "महाजनी सभ्यता" की पोल खोल कर उस पर तीखा व्यंग्य प्रहार किया है और बताया गया है कि भारत के व्यापारी पैसों के लालच में मार भी खा सकता है पर मिलावट करना नही छोड़ेगा। चाहे आंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की साख रहे या न रहे

---

१ "पगड़ियों का जमाना", (अन्न की मौत), पृ.९३।

पर ये व्यापारी मिलावटी सभ्यता का प्रचार प्रसार करते रहेंगे ; जैसे; — "शुद्ध माल मुर्दाबाद ! मिलावटी संस्कृति जिंदाबाद ! महाजनी सभ्यता अमर हो ! ऐसे मुनाफाखोर,मिलावटी माल बेचनेवाले भारत के व्यापारियों की पोल खोलते हुए परसाई जी लिखते हैं, —

> "महान समन्वित संस्कृतिवाले भारतीय व्यापारी इलायची में कचरे का समन्वय करेंगे, गेहूँ में मिट्टी का, शक्कर में सफेद पत्थर, मक्खन में स्याहीसोख कागज का। जो विदेशी हमारे माल में "मिलावट" की शिकायत करते हैं वे नही जानते कि यह मिलावट नही हैं "समन्वय" हैं, जो हमारी संस्कृति की आत्मा हैं।" [१]

सरकार व्यापरियों के मुनाफाखोरी और मिलावटी से, गुण्डों के गुण्डा गर्दी से, कालाबाजारियों आदि के कारण चिंतित हैं मगर अपराधी चिंतित नही हैं। सरकार इन सबके खिलाफा ठोस कदम नही उठा पाती। अगर सरकार ठोस कदम से कोई कार्यवाही करे तभी अपराधी चिंतित होगा। सरकार की इस प्रवृत्ति पर व्यंग्य कसते हुए परसाई लिखते हैं; —

> " पर साधों, इस दयावान देश में इतनी कठोरता नही हो सकती। यह धर्मप्राण देश हैं। यहाँ साँप को दूध पिलाया जाता हैं। यहाँ अपराधी को दण्ड कैसे मिल सकता हैं ? " [२]

परसाई जी ने सही कहा हैं, यहाँ अपराधी को सजा नही मिलती। यह देश की स्थिति हैं कि – जूठन चुराकर खानेवाले ही घटिया कुत्ते पिट रहे हैं। १० किलों अनाजवाला जेल जा रहा हैं और दस टक चोरी से बेचनेवाले को बेखटके नाके के बाहर जाने दिया जाता हैं। "रामकथा क्षेपक" इस व्यंग्य लेख में परसाई जी ने यह बताया हैं कि कालाबाजारी, तस्करी स्मगलिंग करनेवालों को हथकडी नही पहनाई जा सकती क्योंकि उसकी पहुँच उपर तक होती हैं,

---

१ "सुनो भाई साधों", (मिलावट की सभ्यता), पृ॰५,६।

२ "सुनो भाई साधो", (सरकार चिंतित हैं), पृ॰६०

यह आज के युग का सत्य है।

> "भरत ने कहा — स्मगलिंग यो अनैतिक है पर स्मगल किए हुए सामान से अपना या अपने भाई - भतीजों का फायदा होता हो, तो वह काम नैतिक हो जाता है।" [१]

यह राजनीतिक जीवन का तथ्य है कि स्मगलर, कालाबाजारियों का राजनीतिक और शासन तंत्र के बडे-बडे लोगों से सम्बन्ध होते हैं, जिसके कारण देश में स्मगलिंग होता ही रहेगा। इसी विसंगति को परसाई जी ने व्यंग्य के माध्यम से उजागर किया है।

गलत राजनीति को लक्ष्य करते हुए परसाई जी बताते हैं कि घर से दूकान तक पहुँचते कीमते बढ़ जाते हैं और घर से लाए पैसे कम पड़ते हैं। दोहरी मुल्य-नीति पूँजीवादी अर्थव्यवस्था का सर्वाधिक अनैतिक प्रासम है, जो स्वयं पूँ पूँजीवादी नैतिकता के विरुद्ध है। राशन की शक्कर या खुले कोटे की शक्कर गायब होती है, किन्तु यहाँ तो पूरी शक्कर से लदी रेलगाडी ही गायब हो जाती है। शक्कर खाद्य है, उसका अभाव और आसमान छूती कीमत का असर सामान्य जन-जीवन पर पड़ता है। प्रस्तुत व्यंग्य लेख "अभाव की दाद" में परसाई जी ने जमाखोरी और मुनाफाखोरी प्रवृत्ति के कारण बढ़ती हुई मँहगाई का पर्दाफाश किया है। "अभाव की दाद" में भगतजी कहते हैं, —

> "चिन्ता मत करों, भैय्याजी, मेरे असत्य के रासायनिक प्रयोग चल रहे हैं। मैं मिट्टी से शक्कर बनाने की विधी खोज लूँगा।" [२]

व्यापारी वर्ग के मुनाफाखोरी प्रवृत्ति के कारण मँहगाई दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। आसमान छूती कीमत ने आम आदमी का जीना दुष्कर हो गया। अनाज के दाम इतने बढ जाते हैं कि घर से लाए पैसे कम पड जाते हैं।

---

१ "अपनी अपनी बीमारी", (रामकथा क्षेमक), पृ॰२९।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (अभाव की दाद), पृ॰१०४।

व्यापारियों के साठेबाजी और मुनाफाखोरी प्रवृत्ति के कारण देश की लाखों करोड़ो जनता एक वक्त के भोजन को मोहताज बनी है। देश की लाखों करोड़ो भूखी जनता के वाणी को अभिव्यक्ति देते हुए परसाई जी लिखते हैं; —

" सवेरे सामने की झोपडी की एक स्त्री लडके को इसलिए मार रही थी कि वह रोटी माँग रहा था। लडके ने विचार किया कि भूख में जादा कष्ट है या मार में। उसने तय किया कि मार में ज्यादा कष्ट है। वह भूख को लेकर माँ को गाली देता हुआ भाग गया। " [१]

परसाई जी का संसदीय लोकतंत्र से विश्वास उठ गया है क्योंकि इस लोकतंत्र से समतावादी समाज की स्थापना नही होगी और भूखमरी की समस्या दिन-ब-दिन बढ़ती ही जाएगी। जमाखोरी, मुनाफाखोरी और कालाबाजारियों को रोकने को संसदीय लोकतंत्र असमर्थ है, तभी परसाई जी ने "अकाल उत्सव" नामक व्यंग्य लेख में भूखे लोगों से संसदभवन के पत्थर उखाडकर फेंक दिये हैं। पेठ की आग को शांत करना बहुत मुश्किल काम है, उसमें बहुत ताकत होती है; बड़े बड़े पहाड़ भी उखाड़ फेंक दिये जाते हैं, उसमें बहुत जोश होता है., —

" गणतंत्र - दिवस पर परेड होती है, अकाल में सस्ते गल्ले की राशन-दुकान पर भी परेड होती है और ज्यादा जोश से होती है। गणतंत्र परेड कुछ घण्टे होती है, अकाल परेड महीने में हर रोज होती है। राशन दुकान पर खाली झोला लिये खडी फौज में उन फौजियों से ज्यादा जोश होता है। " [२]

देश में भूख के कारण कितने ही लोगों की जाने चली जाती है, जिस पर प्रस्तुत व्यंग्य लेख "भूख मारने की जड़ी" में भूखमरी की समस्या पर परसाई जी ने प्रकाश डाला है। सरकार व्यापारियों के साठेबाजी, मुनाफाखोली और मिलावटी से चिंतित है इसलिए परसाई जी ने सरकार को सलाह दी है कि अब

---

१ "पागडंडियों का जमाना", (वो जरा वाइफ है न), पृ.५८,५९।

२ "वैष्णव की फिसलन", (अकाल उत्सव), पृ.१५।

"भूख हरण बूटी विभाग" खोल दो जिससे आदमी कई दिन भूख को मार सकता है; जैसे; —

" आगामी मुख्यमंत्री सम्मेलन में यह तय करना चाहिये कि हर राज्य की जमीन में इस भूख हरण बूटी को खोजा जाय। तमाम जंगलों में साधु, फकीर और गुनियां को भेजकर इस बूटी का ~~पता लगाना~~ चाहिये। इसके लिये हर राज्य में एक अलग "भूख हरण बूटी विभाग" खोल दिया जाय और एक अलग "भूख-हरण मंत्री" हो। यह विभाग अपने राज्य की सारी जड़ी-बूटी इकट्ठी कर ले। इस जड़ी का एक टुकड़ा एक मन गेहूँ के बराबर होगा।" [१]

परसाई जी ने देश के नेताओं तथा शासन व्यवस्था पर एक करारा तमाचा मारा है। जब देश की जनता भूखी प्यासी है और अपने देश के कर्णधार उद्घाटन, विमोचन जैसे समारोह में अपना वक्त यूं ही बिता रहे हैं। तो ऐसे उद्घाटन, विमोचन के समारोह में जुट गये नेताओं का ध्यान देश की भूखमरी जैसे समस्याओं की ओर आकर्षित करने के हेतु परसाई जी लिखते हैं; "मुजफ्फर पुर में जब लालकृष्ण अडवाणी टेलीविजन केंन्द्र का उद्घाटन कर रहे थे, तब नारे लगे थे, — टी॰वी॰ नहीं, रोटी चाहिए।

"अडवाणी को कह देना चाहिए था — सरकार आपकी मांग मंजूर करती है। टेलीविजन पर रोटी भी दिखायी जाऐगी।" [२]

देश के जन-साधारणजनों का हर एक अवयव पीड़ा का एहसास कर रहा है। देश का साधारण व्यक्ति युग के चौराहे पर खड़ा है; जहाँ उसके पास कुंठा के सिवाय कुछ नही है। आकाश में उड़ान भरने की महत्वाकांक्षा उसकी मर गई और जनम लिया है, एक दूसरी आकांक्षा ने — रोटी की आकांक्षा।

---

१ "सुनो भाई साधो", (भूख मारने की जड़ी), पृ॰१०१, १०२।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (हीनता का अतिराष्ट्रवाद), पृ॰७१।

देश की आर्थिक स्थिति डावाडोल हो गई है। आर्थिक विकास को ध्यान में रखते हुए समय समय पर पंचवार्षीय योजनाएँ लागू की गयी लेकिन नेताशाही, अफसरशाही और सेठशाही, की मिली-जुली साठ-गाँठ ने आर्थिक भ्रष्टाचार को जन्म दिया। नेताओं और अफसरों ने रिश्वत लेकर अपने-अपने घरों को भरना शुरू कर दिया। बढ़ते हुए भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी के कारण इन योजनाओं पर व्यय किये जानेवाले धन का आधे से ज्यादा भाग नेताओं अफसरों तथा एजन्टों के पेट में समा गया। जमाखोरी, मुनाफाखोरी के कारण बढ़ती हुई महँगाई ने आम आदमी की कमर तोड़ दी। देश में करोड़ों दिन-हीन, गरीब भूख से व्याकुल देख परसाई की आत्मा तिलमिला उठी। एक तरफ ऊँची इमारते है, फाईव स्टार होटल हैं, जहाँ ऐश-ओ-आराम की ज़िन्दगी मौजुद है, तो दूसरी ओर सडकों और गन्दे नालों के किणारे भूख-प्यास से पीडित नंगी मानवता सिसक रही हैं। यह वैषम्य देखकर स्वयं व्यंग्यकार परसाई जी अपने आप से प्रश्न करता है कि जब इन्हे पेट भर खाने को रोटी नही मिलती तो फिर ये लोग जीतित क्यो हैं ? अपने प्रश्न का उत्तर परसाई स्वयं खोजने हूए कहते हैं; --

> " वास्तव में ये मरने की इच्छा को खाकर जीवित हैं। ये रोज कहते हैं -- इससे तो मौत आ जाय तो अच्छा ! " [१]

कांग्रेस ने इस देश पर कई वर्षो से राज्य किया है। केन्द्र में ही नही अधिकांश राज्यों में भी सत्ता उसी के हाथों में रही हैं। कांग्रेस द्वारा महँगाई और गरीबी को दूर करने के प्रयास हूए, लेकिन भ्रष्ट मंत्रियों और नेताओं की स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण वे सब नाकामयाब ही रहे। "गरीबी हटाओं" का नारा दिया गया लेकिन गरीबी हटी केवल नेताओं और मंत्रियों के घरों की। अपने अपने घर की गरीबी हटाकर इन लोगों ने कर्तव्यों की इतिश्री समझ ली।

---

१ "वैष्णव की फिसलन", (अकाल उत्सव), पृ॰१७।

भारत को आजाद हुए लम्बा समय व्यतीत हो चुका है लेकिन यहाँ के नेताओं ने अब तक देश को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर नही बना सके। विकास योजनाएँ लागु करने के लिए विदेशों से व्याज पर हर साल कर्ज लिया जाता है। विदेशी कर्ज के बोझ ने भारतीय अर्थव्यवस्था की कमर तोड दी है। करोडो रुपया हर साल देश को ब्याज के रुप में चुकाना पडता है। हमने कभी यह नही सूना कि - भारतीय अर्थव्यवस्था ने जापान की माँग के अनुसार उन्हे दस करोड रुपया कर्जा दे दिया है बल्कि यह सूना है — आंतरराष्ट्रीय नाणेनीधि की ओर से भारत को दस कोटी रुपया कर्ज के रुप में दे दिया है जिसका प्रतिवर्ष ब्याज एक कोट रुपया भारत सरकार को देना पड़ता है। भारतीय अर्थव्यवस्था की इस बिगड़ी हुई स्थिति पर व्यंग्य का प्रहार करते हूए परसाई जी लिखते है; —

" अपनी अर्थव्यवस्था को डेंगु हो चुका है। लेटती है तो उठा नही जाता। बिठा दो तो लुढक जाती है। पूछता हूँ - माताजी, यह क्या हो गया ? कहती है - बेटा, डेंगु हो गया। बाहर से "इनफेक्शन" आया था। मेरे बेटे रुपये को भी डेंगु हो गया था। कितना दुबला गया बेचारा।" [१]

सत्ताधारी शासक वर्ग, धार्मिक ठेकेदार, उद्योगपति, नेता, प्रशासनिक अधिकारी सभी ने मिलकर देश की अर्थव्यवस्था को गिरा दिया है। चाहे धर्म हो, या राजनीति या शिक्षा का क्षेत्र क्यो न हो, प्रत्येक जगह धन एवं धनवानों का बोलबाला बढ़ने लगा है। दानत्व के अभाव में कोई धनी बन ही नही सकता। देश की सामान्य जनता किसान, मजूदूर खेत, या मिल में काम करनेवाले मजदूर ये लोग अपना पसीना बहाते है और इस देश के पूँजीपति, जमिंदार, उद्योगपति इन्ही लोगों का शोषण करके कुबेर बन बैठे है। अर्थव्यवस्था की यह विकृति हमारे शासन प्रणाली की विकृति है, जिस पर परसाई ने अपने व्यंग्य का प्रहार करते हुए लिखते है ; —

---

१ "पगड़ंडियों का जमाना", (डेंगु, अध्यात्म और लेखक), पृ॰९२२ ।

" लक्ष्मी की उत्पत्ति की कल्पना अद्‌भुत हैं, वह समुद्र-मंथन से अन्य रत्नों के साथ निकली थी। समुद्र-मंथन अकेले देवों ने नही किया था। उसके लिए दानवों का सहयोग लिया था। जब रत्न निकले तो दानवों को तो मदिरा पिला दी और लक्ष्मी को विष्णु ले उड़े। " [१]

बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण समस्याओं का अंत होना कठिन हैं चाहे वह भूख की समस्या हो या बेकारी की। आज देश के लोगों को "परिवार नियोजन" का महत्व समझना चाहिए लेकिन देश का शिक्षीत आदमी हो या अशिक्षीत हो वह बच्चे पर बच्चे पैदा ही करता रहता हैं। हम दो हमारे दो का नारा अब पूराना हुआ मै तो मानता हूँ कि हम दो हमारा एक का नारा बुलन्द होना चाहिए। इसतरह "परिवार नियोजन" का महत्व न समझकर बच्चे पर बच्चे पैदा करने वाले लोगों को परसाई जी ने "फेमिली प्लेनिंग" नामक व्यंग्य निबंध में सचेत किया हैं कि अधिक बच्चे पैदा करना विनाश की खाई में लौटना हैं ; —

" जीव ने समझाया, भगवन्, आप तो कुछ देखते - समझते नही हैं; बच्चे पर बच्चे देते जाते हैं। मै जानता हूँ कि गरीब मास्टर के सातवे बच्चे की जिन्दगी कैसी होगी। यह आदमी मेरे दवाखाने के पास ही रहता हैं। इसके बच्चे न भर-पेट खा पाते हैं, न कपड़े पहन पाते। भूखे, मरियल, गन्दे बच्चे हैं इसके। न स्वास्थ, न शिक्षा, न संस्कार, न कोई भविष्य! मै इनका सातवाँ लडका रहूँगा। जरा मेरी हालत की कल्पना कीजिए। " [२]

बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण देश में लोगों को रहने के लिए जगह नही मिल रही हैं। पाँच, छ लोगों का परिवार गंदे मुहल्ले में बदबुदार कमरे में अपना पारिवारीक जीवन बीता रहा हैं तो दुसरी ओर आलीशान बंगलों में

---

१ "पाखण्ड का अध्यात्म", (हस्ती मिटती नही हमारी), पृ.४८।

२ "जैसे उनके दिन फिरे", (फेमिली प्लैनिंग), पृ.९९।

दो नंबर का धंधा करनेवाले लोग ऐश-ओ-आराम की जीन्दगी काट रहे हैं। वे लोग शराब बेचते हैं, स्मगलिंग करते हैं, होटल चलाते हैं, प्रशासन क्षेत्र में भ्रष्टाचार, रिश्वत लेते हैं, फिर भी वे समाज में प्रतिष्ठित, सभ्य माने जा रहे हैं और जो लोग ईमानदारी से मेहनत -मजदूरी करके अपनी रोजी-रोटी कमाते हैं वे अब फुटपाथ पर अपना जीवन बीता रहे हैं। ऐसे सामान्य लोग इन आलीशान महलों में रहने की कल्पना से भी कांप उठते हैं अगर ऐसा हुआ तो समाज में प्रतिष्ठित माने जानेवाले लोग उन्हे नोच-नोच कर मार डालेंगे। यही भय आज सामान्य आदमी के मन में छाया रहा हैं, इसी विवशता को परसाई जी ने "त्रिशंकु बेचारा" नामक व्यंग्य रचना में व्यक्त किया हैं।

> " उसनें बड़ी दीनता से कहा, "साहब, मुझे न जाने कैसा लग रहा हैं। मुझे लगता हैं, वहाँ हम केवल मन से रह सकते हैं; सदेह रहने जायेंगे, तो वे लोग स्वीकार नही करेंगे। " [१]

बढ़ती हुई लोकसंख्या के कारण बेकारी की समस्या अपने देश में हर जगह मुँह फैलाये खड़ी हैं, जिसका हल होना असंभव हैं। देश का हर एक क्षेत्र राजनीति से प्रभावित हैं। राजनीति की तरह इन्टरव्यू के समय यह उम्मीद्वार किस नेता, मंत्री का रिश्तेदार, आदमी हैं, यही देखकर उसे नौकरी दी जाती हैं। उसकी योग्याताएँ क्या हैं? यह नही देखा जाता। इन्टरव्यू के समय जिसे लेना हैं, उसके लिए अलग प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं और जिसे नही लेना हो उसके लिए कठिन प्रश्न पूछे जाते हैं। जिसके कारण योग्यता सम्पन्न उम्मीद्वार बेकारी की समस्या का शिकार बने दर-दर ठोकरे खाते हुए भटक रहे हैं। यह कैसी विड़म्बना हैं कि योग्यता होकर भी न्याय नही मिलता, तो यह शिक्षा किस काम की हैं? जो अयोग्य व्यक्तियों को महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त किया जा रहा हैं।

"इन्टरव्यू मुफतलाल का होना डिप्टी कलेक्टर" इस व्यंग्य निबंध में मुफतलाल डिप्टी कलेक्टर पद के लिए आवेदन भेजता हैं। मुफतलाल की विशेष

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (त्रिशंकु बेचारा), पृ•६७।

योग्यता वह हैं कि वह राज्य के ऐसे व्यक्ति का कृपापात्र हैं जिसका शासन कर्ताओं पर प्रभाव हैं। मुफ्तलाल ऐसे प्रतिष्ठित, राजनीति पर अधिकार होनेवाले व्यक्ति का कृपापात्र आदमी होने के कारण जो एम.ए. फर्स्ट क्लास, एल.एल.बी. फर्स्ट क्लास होनेवाले योग्यता सम्पन्न उम्मीदवार को कठिन दर्शनिक प्रश्न पूछकर अयोग्य ठहरा जाता हैं और मुफ्तलाल को जो प्रश्न पूछे गये वह इस प्रकार हैं, जिन्हे परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया हैं ;

" एक सयाने ने पूछा, "कुमार साहब कैसे हैं ?
मुफ्तलाल ने जबाब दिया, "अच्छे हैं। "
दूसरे ने पूछा, "आज तुमने क्या खाया था ?
मुफ्तलाल तपाक से बोला, "रोटी, चावल, दाल, सब्जी, अचार।"
मुखिया ने कहा, "कैसे तपाक से जबाब देता हैं! वेरी स्मार्ट।"
तीसरे सयाने पूछा, "आज कल शहर में कौन-सा अच्छा फिल्म चल रहा हैं?
मुफ्तलाल ने फौरन उत्तर दिया, "चौदहवी का चाँद - जिसमें वहीदा रहमान, गुरुदत्त, जॉनी वॉकर, हैलन, वगैरह काम करते हैं।
मुखिया ने कहा, "वाह! बडा होशियार और स्मार्ट लडका हैं।
इन्टरव्यू समाप्त हुई।
सयानों के मुखिया ने कहा, "बेटा, तुम्हारी योग्यता से हम सब प्रभावित हुए। तुम डिप्टी कलेक्टर के लिए चुन गये।..... तुम कुँवर साहब के आदमी हो, इसलिये तुम्हारी नियुक्ति जल्दी हो जायेगी। जाओ तुम्हारा भविष्य उज्वल हैं। " [१]

नौकरी पानेवाले हर एक व्यक्ति के पास योग्यताएँ होती हैं लेकिन नौकरी पाने सिर्फ योग्याताएँ काम नही आती, तो इसके लिए किसी नेता के सिफारिशी चिठ्ठी का होना भी बहुत जरूरी हैं। हर एक व्यक्ति और उसकी योग्यताएँ सत्य होती हैं फिर भी नौकरी पाने के लिए बेईमानी की सिफारिशी

---

१ "काग भगोडा", (इन्टरव्यू मुफ्तलाल का होना डिप्टी कलेक्टर), पृ.२३।

चिठ्ठी चाहिए, जिस पर प्रकाश डालते हुए परसाई लिखते हैं ;

"देखता हूँ कि हर सत्य के हाथ में झूठ का प्रमाण-पत्र है। ईमान के पास बेईमानी की सिफारिशी चिठ्ठी न हो, तो कोई उसे दो कौड़ी को न पूछे।" [१]

आर्थिक तंगी के कारण स्त्री आज परदे के बाहर निकलकर पुरुष के बराबर काम कर ही है। उसे काम की तलाश में समाज के बडे बडे व्यक्तियों के पास जाना पडता है। समाज में हम जिन्हे, सभ्य, प्रतिष्ठित महात्मा समझते हैं, ऐसे ही व्यक्तियों का चरित्र गिरा हुआ होता है। वे अवसर का लाभ उठाकर समाज के दीन - दलित महिलाओं का भोग लेते हैं, उनकी इज्जत पर डाका डालते हैं। ऐसे सभ्य, प्रतिष्ठित, महात्मा कहलानेवाले लोगों के चरित्र का पर्दाफाश करते हुए परसाई लिखते हैं ; —

" एक स्त्री नौकरी के सिलसिले में एक बड़े आदमी के पास सच्चरित्रता का प्रमाणपत्र लेने गयी थी। बड़े आदमी ने उसे पहले अपने शयन-कक्ष में ले जाना चाहा और बाद में सच्चरित्रता का प्रमाणपत्र देना चाहा।"[२]

विधवाश्रम, अनाथालय, नारी-निकेतन, कन्या-पाठशाला, संगीतशाला जैसे अनेक सेवाभावी संस्थाएं दीन-दलित, परितक्ता, मातहन महिलाओं के सेवा के लिए खोले जाते हैं लेकिन यही सेवाभावी संस्थाएं अब वासनापूर्ति के अड्डे बन गये हैं। अमीर लोगों की वासना-पूर्ती के लिए अनाथालय, विधवाश्रम, नारी-निकेतन से हर उम्र की औरत उचित दाम पर मिल जाती हैं। प्रस्तुत निबंध "डेंगु, आध्यात्म और लेखक" में परसाई जी ने ऐसे सेवाभावी संस्थाओं का भण्डाफोड कर दिया है।

" आश्रम के नाम से चकलाधर चले तो भला ही लगता है। नैतिक सुधार के नाम से अगर लड़कियां भगायी जाये, तो किसी को एतराज नही होता।" [३]

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (पृ.७८।
२ " — वही — पृ.७७।
३ — वही — (डेंगु, अध्यात्म और लेखक), पृ.१२०।

देशवासियों की सेवा करने के लिए भारत में जगह जगह सेवा संस्थाओं का निर्माण किया लेकिन इन संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने देशवासियों की सेवा के लिए मिलनेवाले अनुदान को वैयक्तिक स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने लगे और जनता से भी चन्दा वसूल करने लगे। ऐसे समाज सेवी संस्थाएं और उनके कार्यकर्ताओं पर व्यंग्य का प्रहार करते हुए परसाई लिखते हैं —

> " हे देशवासियों, गांधी – युग में "सेवा" नामक जो "धर्म" था, उसे गांधी जी के बाद धन्धा बना लिया गया हैं। इस धंधे में जनता हमारी कर्जदार हैं।" [१]

एक ओर नारी स्वतंत्रता की लडाई राजनैतिक स्तर पर तो लडी जाती हैं तो दूसरी ओर नारीयों के साथ बलत्कार होने की खबरें अखबारों में छापी जाती हैं। औरत तो नेताओं के लिए चलती फिरती वेश्या हैं, जिसका जब चाहा इस्तेमाल किया जाता हैं। बलात्कार सिर्फ शरीर बल से नहीं होता, वह भय या लोभ दिखाकर भी होता हैं। भय या लोभ दिखाकर बलात्कार करनेवालों की समाज में कोई कमी नही हैं। ऐसे लोगों की कटु से कटु आलोचना परसाई जी ने की हैं; —

> " बलात्कार शरीर बल से ही नही होता, भय और लोभ से भी होता है। प्रोफेसर पीएच॰डी॰ का लोभ देकर छात्रा का भोग करता हैं;तो वह बलात्कार होगा। नौकरी से निकालने का डर दिखाकर साहब मातहत का भोग करता हैं, तो वह भी बलात्कार होगा। नेता पार्टी टिकट देने के लोभ से भुवनमोहिनी त्रिपुरसुंदरी को प्राप्त करना हैं, तो वह भी बलात्कार हुआ।" [२]

प्राचीन काल में ऋषि-मुनि जिस स्त्री से कह देते थे कि, शुभे, "मैं तेरे साथ रमण करना चाहता हूँ और स्त्री समर्पण कर देती थी। वह डरती थी कि

---

१ "सुनो भाई साधो", (भारत सेवक-समाज), पृ॰५२।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (हल्ला, और कलंक का तंत्र), पृ॰६१।

मना करने पर ऋषि उसे भस्म कर देंगे। ठीक यही हाल आज के राजनीति, शिक्षा, धर्म, और प्रशासन क्षेत्र में चल रहा है, जिसे परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है। जो लोग सदैव औरत को सिर्फ भोग की वस्तु मानते हैं और सडक पर सदैव लडकियों को छेडते रहते हैं, आवारा गर्दी करते रहते हैं, ऐसे लडकों को मैं "सडक सख्या हरि" कहलाता हूँ। ऐसे लोगों को परसाई जी ने "भेडिये" कहकर बडा ही मार्मिक व्यंग्य प्रहार किया है।

" आज फिर एक शिकायत आयी है कि तुमने किसी भेडिये के जीव को मानवी के गर्भ में रख दिया। अब वह लडका बडा होकर सडक पर लडकियों को छेडता है। " १

आज हम सब इक्कीसवी सदी की ओर चल रहे हैं फिर भी अपने समाज में स्त्री को पुरुषों के बराबरी का स्थान नही मिल रहा है। अनेक क्षेत्र में स्त्री आज पुरुष के कन्धे से कन्धा मिलाकर काम कर रही हैं, फिर भी अपनी पुरुष प्रधान संस्कृति उसका तिरस्कार करती रहती है। स्त्री आज भी समाज में अपवित्र है। स्त्री को बराबरी का स्थान देने से पुरुषों के अहंकार को ठेस पहुँचती है। समाज में आज भी दहेज के लिए अनेक मासूम लडकियों को जिन्दा जलाया जाता है। आखिर इस पुरुष प्रधान संस्कृति में स्त्री का क्या स्थान है? जिस पर प्रकाश डालते हुए परसाई लिखते हैं ; —

" वह हमारी औरत है। हम चाहे उसे पीटे, चाहे मार डालें। तुम्हे बीच में बोलने का क्या हक है। ठीक कहता है वह। जब वह कद्दू काटता है, तब कोई एतराज नही करता, तो औरत को पीटने पर क्यों एतराज करते हैं? जैसा कद्दू वैसी औरत। " २

परसाई जी ठीक कहते हैं, जैसा कद्दू वैसी औरत। यही स्थान है अपने पुरुष प्रधान संस्कृति में औरत का। क्या संगति क्या विसंगति, सभी कुछ पूरी ईमानदारी के साथ संवेदनशील पाठक समझता है, सोचता है, अनुभव करता

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", पृ. ९६, ९७।

२. "पगडंडियों का जमाना (आँगन में बैंगन), पृ.८२।

हैं, तिलमिलाता हैं और स्वयं अपने आप को कोसता रहता हैं। बन्नू स्वतंत्र भारत का आझाद पुरुष हैं। वह कायस्थ राधीका प्रसाद की पत्नी सावित्री को अपनी बीवी बनाने का इच्छुक हैं लेकिन कायदे कानून से यह होना कतई संभव नहीं हैं कि किसी दूसरे की पत्नी को अपनी मर्जी से अपनी बीवी बनाया जाय किन्तु बाबा सनकीदास जैसे लोग "अनशन" के पवित्र अस्त्र से अपने मकसद में कामयाब हो जाते हैं।

सार्वजनीक हित के लिए "अनशन" होना जरूरी हैं लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद इस देश के लोगों ने अपने स्वार्थ के लिए अनशन के पवित्र अस्त्र का उपयोग किया। अनशन सफल बनाने जनभावनाओं का सहयोग चाहिए पर बाबा सनकीदास जैसे लोग "अनशन" सफल बनाने क लिए सरकार को आत्मदाह की धमकी देना, अनशनियों के प्राण रक्षा के लिए मंदीरों में प्रार्थना शुरू करना, जातीवाद का फूट देना, नेताओं की मध्यस्था, अखबारों में छपवाना — "कोटी-कोटि जनता की माँग", शहर में जातीयता का तनाव निर्माण करना, कर्फ्यु लगवाने की स्थिति निर्माण करना आदि का सहारा ले रहे हैं। जनतंत्र में जनभावनाओं का आदर होना अपेक्षित हैं, पर बाबा सनकीदास जैसे लोग अपने स्वार्थो के लिए टुच्ची-सी बात को राजनीतिक, सामाजिक "ईशू" का आकार दे देते हैं। दूसरे की बीवी को छिनने के लिए अनशन के पवित्र अस्त्र का उपयोग किया जा रहा हैं, यह देखकर यह मानना पडता हैं कि स्वतंत्रता के बाद जनतंत्र की लगातार हत्या ही हो रही हैं, जो बन्नू जैसे लोग अनीति के राह पर चलकर दूसरे की बीवी छिनने "अनशन" के पवित्र अस्त्र का सहारा ले रहे हैं, जैसे ; —

" मेरी आत्मा से पुकार उठ रही हैं कि मैं अधूरी हूँ। मेरा दूसरा खण्ड सावित्री में हैं। दोनों आत्मखण्डों को मिलाकर एक करों या मुझे भी शरीर से मुक्त करों। मैं आत्मखण्डों को मिलाने के लिए आमरण अनशन पर बैठा हूँ। मेरी माँग हैं सावित्री मुझे मिले। यदि नही मिलती तो

मैं अनशन से इस आत्मखण्ड को अपनी नश्वर देह से मुक्त कर दूँगा। मैं सत्य पर हूँ, इसलिए निडर हूँ। सत्य की जय हो!" [१]

इसप्रकार परसाई जी का व्यंग्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के यथार्थ का व्यंग्य है। व्यक्ति के स्वार्थ किस प्रकार मानवता को पतन की ओर ले जाते हैं इसका विस्तृत ब्यौरा परसाई के लेखन में देखने मिलता है। स्त्री के साथ होनेवाले अन्याय, अत्याचार को सिर्फ पुरूषों को दोषी ठहराना उचित नही है। इसके लिए स्त्री भी जिम्मेदार है। पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव से फैशनेबल लडकियाँ, जिनके जिवन का मुख्य कर्म अंग प्रदर्शन से अपनी ओर लफंगों को आकर्षित करना, शादी से पहले गर्भवती रहना, एक स्त्री का अनेक व्यक्तियों से अनैतिक संबंध आदि कारणों से स्त्री अपने आप को दिन-ब-दिन नैतिक पतन की ओर ढकेल रही है। हमारी युवा पीढ़ी पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति के रंग में रंगकर अपनी पुरातन उदात्त और महान सांस्कृतिक परम्परा को पूरी तरह भूलती जा रही है। पश्चिमी प्रभाव के कारण मादक और नशीली वस्तुओं का सेवन दिनोंदिन बढ़ता ही जा रहा है। स्त्रियों में भी कुछ छिपकर और कुछ खुलकर सिगरेट और शराब का सेवन करती है। हमारे आचार-विचार, खान-पान, वेश-भूषा सब-कुछ बदल गये। चरित्र जो हमारे जीवन की अमूल्य धरोहर समझा जाता था वह भी पतित होता चला गया स्थिति यहाँ तक आ गई कि आज हम भारतवासियों का कोई चरित्र ही नही रह गया है। परसाई जी ने अपने व्यंग्य निबंधों के माध्यम से सांस्कृतिक जीवन की विसंगतियों को अभिव्यक्ति दी है।

मेकअप का आर्ट हमारी महानतम् वैज्ञानिक खोज है, जिसमें झूठ और सच दोनों एक जैसे दिखते हैं। मेकअप द्वारा जवान और बुड्ढे दोनों में कोई फर्क नही दिखता, इसमें ईमानदार और बेईमान दोनों एक जैसे दिखते हैं। मेकअप हमारे राष्ट्रीय चरित्र की शोभा में वृध्दि कर रहा है। आज हर तरुणी अपने पर्स में मेकअप की सामग्री रखकर दिन में न जाने कितनी ही बार मेकअप करती रहती है। उसके चेहरेपर मेकअप की परते आवरण की तरह छायी रहती है., ऐसे कितनी ही तरुणीयों को परसाईजी ने "मेनका का तपोभंग" नामक व्यंग्य

१ "सदाचार का ताबीज", (दस दिन का अनशन), पृ.१२०, १२१।

निबंध में अपने व्यंग्य का निशाना बनाकर उनका मजाक उडाया हैं। —

> " इन्द्र ने कहा, "सुन्दरी, पाउडर की परते धूल रही हैं, स्नो बह रह हैं, रुज धूल रहा हैं। मेरी खातिर नही तो अपने मेकअप के खातिर ही रोना बन्द कर।" [१]

"विज्ञापन में बिकती नारी" इस व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने नारी सौंदर्य की विडम्बना की ओर संकेत किया हैं। आज विज्ञापन में हर चीज पर नारी दिखती हैं। वह भारतीय संस्कृति का प्रतिक बनकर विज्ञापन में नही आती बल्कि पाश्चात्य संस्कृति का प्रतिक बनकर, अपने धुंधराले बालों की घटा फैलाकर, हवा के झरोखे में अपने साडी का आंचल पसारे, अपने वक्षस्थल को दिखाते हुए कहती हैं कि, "आइए ······· फॅन खरीदीए।" इसे देखक ऐसा लगता हैं ;

> " नारी सौंदर्य को कम्पनियों ने खरीद लिया हैं। अब ये उन्ही के मारफत मिल सकते हैं।" [२]

संस्कृति एक महान तत्व हैं, भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीन और महान संस्कृति मानी जाती हैं। सत्य, अहिंसा, त्याग ये अपने संस्कृति के महान तत्व हैं। नृत्य, संगीत, नाट्य आदि के सहारे हम सांस्कृतिक समारोह का आयोजन करते हैं लेकिन आज इन सांस्कृतिक समारोह में विकृतियों ने जन्म लेना शुरू किया हैं। असल में लोग नृत्य देखने नाट्यशाला में नही चले जाते बल्कि, लडकियों को देखकर शोर मचाना, उनको छेडना, उनपर कंकड फेकना आदि के लिए चले जाते हैं। एक दूसरे के साथ झगडा, कुर्सियां तोड़ना आदि प्रवृत्तियों ने हमारे सांस्कृतिक समारोह में जन्म लिया हैं। हमारे कॉलेज के वार्षिक स्नेह संम्मेलन में आज-कल यही देखने मिलता हैं, जिसे अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाते हुए परसाई जी लिखते हैं;

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (मेनका का तपोभंग), पृ॰५८।

२ "काग भगोडा", (विज्ञापन में बिकती नारी), पृ॰७५।

" निमंत्रण - पत्र में छापेंगे कि इस समारोह में आवाज कसी, गाली-गलौज, हल्ला, स्त्रीयों पर कंकड फेकना, कुर्सियां तोडना आदि सांस्कृतिक कार्यक्रम होंगे। इसके साथ ही कुछ नृत्य-संगीत वगैरह भी हो जाएगा, जिसके लिए दर्शक हमें क्षमा करेंगे। साधो, जिसे लोग "हुल्लड" कहते हैं, वही वास्तवीक सांस्कृतिक कार्यक्रम है। " [१]

स्वातंत्र्य प्राप्ति के पश्चात् हमने मॉडर्न युग में प्रवेश किया और हमारे देश की युवा पिढी ने खान-पान, वेश-भूषा, रहन-सहन में पुरी तरह बदल किया। आज युवा पीढी को पुराने जीवन-मूल्यों से एक तरह की नफरत सी हैं। नयी और पुरानी पीढी का संघर्ष आज के सांस्कृतिक जीवन की सबसे बडी विडम्बना हैं। युवा पीढी में चारित्र्य सम्पन्नता का अभाव हैं। युवतीयों को चारित्र्य सम्पन्न और शीलवान बनना चाहिए लेकिन आज युवतियाँ शादी से पहले दो-तीन बार गर्भ-पात करती हैं। युवा पीढी रात के अंधेरे में चुपचाप बी.पी. विडीओ कॅसेट देखकर वही अनुकरण करने लगी हैं। आज हमारे होटल, बार में स्त्रीयों को नंगा नचाया जाता हैं और उनका भोग भी किया जाता हैं। आधुनिक होटल की इस बीगडी हुई स्थिति पर प्रकाश डालते हुए परसाई जी लिखते हैं। --

" ग्राहक वैष्णव के पास गया। बोला, "इस होटल में कौन ठहरेगा ? इधर रात को मन बहलाने का कोई इन्तजाम नही हैं।
वैष्णव ने कहा, "कैबरे तो हैं साहब !"
ग्राहक ने कहा, "कैबरे तो दूर का होता हैं। बिलकुल पास का चाहिए, गर्म माल, कमरें में। " [२]

"जहरीली शराब" नामक व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने सरकार की नितियों की आलोचना की हैं। अपने देश में नेता, अफसर, और ठेकेदार सभी मिलकर हाथभट्टी का गैरकानुनी धंधा चलाते हैं। यह बात पुलिस और आबकारीवालों को भी मालूम हैं। पुलीस और आबकारीवाले अगर छापा मारे तो नेताजी बीच में पडकर मामला संभाल लेते हैं। पुलीस और आबकारीवालों

---

१ "सुनो भाई साधों", (सांस्कृतिक हुल्लड), पृ.१३।

२ "वैष्णव की फिसलन", पृ.१३।

के सहयोग के लिए उनका हफ्ता बंधा होता है। हर विधायक जानता है कि उनके क्षेत्र में शराब का धंधा कौन चलाता है, किस होटल में शराब मिलती है। इसलिए शराब बंदी नही होगी, चाहे वह देशी शराब हो या विदेशी। देशी और विदेशी दोनों शराब से लोगों की जाने चली जाती हैं। दोनों शराब से अगर लोगों की मौत होती हैं तो फिर दोनों शराब के लिए बंदी आदेश क्यों नही दिये जाते ? फिर देश में उत्पन्न शराब से होनेवाले लोगों की मृत्यु को लेकर विधासभा में क्यों शोर मचाते हैं ? उसे ही समाचार पत्रों में प्रमुखता क्यों दी जाती हैं ? इस विसंगत परिस्थिति की ओर संकेत करते हूए परसाई लिखते हैं ; —

" दिल्ली की आबादी पचास लाख तो होगी। इनमें से कम-से-कम एक लाख ने मिलावटी या हाथभट्टी का गैरकानुनी ठर्रा पिया होगा। इस एक लाख में से सिर्फ दो मरे। इससे ज्यादा तो स्कॉच पीकर मरे होंगे, जिसका समाचार नही छपा। स्कॉच से मौत की प्रतिष्ठा है। ठर्रे से मौत घटिया हैं। " [१]

स्वतंत्रता के पश्चात् जनता के कल्याण के लिए अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम निर्धारित किये गये। राज्यों का विलीनीकरण कर जनवादी शासन-व्यवस्था की स्थापना की। जमींदारी प्रथा का उन्मुलन कर किसानों को अपने खेतों का स्वामित्व दिलाना सरकार का पहला ठोस कदम है लेकिन सरकार द्वारा जमींदारों से उनकी जमीन छीनने को जो कानुन बनाया वह परसाई जी को एक चाल लगती है, एक प्रकार से साजिश हैं क्यों कि इस प्रकार के कानुन से जमींदार, भूमिपति सतर्क हो जाते हैं और जादह जमीन बेच देते हैं या फिर अपने भाई-भतिजे, बेटा, बेटी आदि के नाम कर देते हैं। इसलिए परसाई जी सरकार को बहादुर कहते हैं, वह धोखे से किसी को नही पकडती, जैसे बुढी दादी ने मुन्ना को सावध किया था। इसीतरह सरकार याने अपने देश के नेता अपने बच्चों को (जमींदार, भूमिपति, नकली दवा बेचनेवाले, शराब बेचनेवाले, ~~शराब बेचनेवाले~~,

१ "पाखण्ड का अध्यात्म", (जहरीली शराब), पृ.९८, ९९।

चोरो, कालाबाजारियों आदि) पहले सावध करती हैं ; जैसे ; —

" सरकार ने कहा, "बडे-बडे भूमिपतियों, हमे मालुम हैं, तुम्हारे पास हजारों एकड जमीन हैं। हम भूमि की सीमा निर्धारित (सीलिंग) कर रहे हैं। साल भर बाद ५० एकड से अधिक जमीन किसी के पास नही रहेगी। हजार एकडवाले ने बहुत-सी जमीन बेच ली, बाकी अपने भाई-भतीजे, बेटा-बेटी, स्त्री के नाम कर दी। सालभर बाद सरकार ने कहा, "लाओ जमीन।" तब भूमिपति ने ताली बजाकर अँगुठा दिखाते हुए कहा "ले, ले ले!" दोनो खिलखिलाकर हँस पड़े।" [१]

परसाई जी ने सरकार की नीतियों पर बड़ा ही कुठाराघात किया हैं। सरकार की नीतियों की पोल खोलना और जनसामान्य लोगों को सरकार की नीतियों की समझ देना, परसाई के व्यंग्य लेखन की सार्थकता हैं। शासन तन्त्र में वही लोग होते हैं जो चुनाव जीतकर संसद या विधानसभा में मंत्री बन जाते हैं। ये लोग कानुन को अपने ढंग से बनाते हैं। इन नेताओं के ऐसे अनेक लोगों से सम्बन्ध होते हैं जो काला धन्धा चलाते हैं। ऐसे लोगों को बचाने का काम भी ये नेता लोग करते हैं। शासन व्यवस्था के इन नेताओं को परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया हैं। परसाई जी किसी शासन तन्त्र से भयाक्रान्त नही हैं। परसाई जी ने राजनीति की विडम्बनाओं और शासन तन्त्र की त्रुटियों पर व्यंग्य करने के साथ साथ सामाजिक और आर्थिक विसंगतियों को भी लोगों के सन्मुख रखा हैं।

भारत सरकार से देश का सर्वांगिन विकास करने के लिए बडी बडी योजनाएँ कार्यान्वित की जाती हैं और उस पर अमल भी किया जाता हैं। इन योजनाओं पर पानी जैसा पैसा बहाया जाता हैं लेकिन प्रशासन क्षेत्र में चपरासी से लेकर बडे अधिकारी, इंजीनिअर, ठेकेदार, दलाल तक सभी भ्रष्टाचारी रिश्वतखोर बन बैठे हैं, जिसके कारण योजनाएँ ठीक से कार्यान्वित नही होती। इन योजनाओं के लिए घटिया सामग्री का इस्तेमाल किया जाता हैं, जिसके कारण

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (सोने का साँप), पृ.४४।

करोडों का प्लाण्ट बरबाद हो जाता है। यह सरकार की कमजोरी है कि प्रशासनिक वफादार नही है। इसी सरकार की कमजोरी पर तथा प्रशासनिक कर्मचारियों पर घनाघाती प्रहार करते हुए परसाई लिखते है। --

" भारत सरकार से पूछता हूँ कि मेरी सरकार, आप कब सीखेंगी ?
मैं तो अब "प्लाण्ट लगाऊँगा, तो पहले रखवाली के लिए कुत्ता पालूँगा। सरकार की मुश्किल यह है कि उसके कुत्ते वफादार नही है। उनमें से कुछ आवारा ढोरों पर लपकने के बदले, उनके आसपास दुम हिलाने लगते है। " [१]

राष्ट्र के नये निर्माण और विकास के लिए पंडित जवाहरलाल ने पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण किया और उसकी जिम्मेदारी देश के बडे अफसर, नेता, प्रशासनिक कर्मचारी आदि पर छोड दी लेकिन जो इन योजनाओं के रक्षक बने वे ही भक्षक बन बैठे ; --

" यह है राष्ट्रीय विकास का पौधा। मगर ज्योंही पौधा बढा, भ्रष्टाचार की बकरी आई। उसने चौकिदार से कहा -- तू मुझे पौधा चर लेने दे। आखिर इसका दूध ही तो बनेगा। तू मुझे दुह लेना। चौकीदार ने बकरी को योजना के चबुतरे पर चढ जाने दिया और बकरी पौधा चर गई। " [२]

कामचोर प्रवृत्ति विकास की नयी नयी मंजीलों को पार नही कर सकती, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में हों। चौराहे में जब दुर्घटना होती है तो टैफिक पुलिस मैन होटल में बैठे चाय की चुस्कियाँ लेता है। ४० मील दूर से लोग जिले के दफ्तार में काम के वास्ते आते है और दफ्तार के सामने साहब का इन्तजार करके चले जाते है। प्रशासन क्षेत्र के इसी कामचोर प्रवृत्ति को लक्ष्य बनाते हूए परसाई लिखते है ; --

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (आँगन में बैंगन), पृ०८४।

२ "सुनो भाई साधों", (बकरी पौधा चर गई), पृ०२५।

" ज्यों ही भारत में राष्ट्रीय सरकार स्थापित हुई, त्यो ही हैजे की बीमारी समाप्त हो गई। कारण यह था कि सरकार ने हुक्म दे रखा था कि हर सरकारी कर्मचारी का पहला उद्देश्य मक्खी मारना हैं। " [१]

प्रशासन क्षेत्र के कर्मचारी कामचोर तो हैं ही पर वे बिना घूस लिये कोई काम ही नही करते। "सुदामा के चावल" में जैसे कृष्ण के दरबारी गरीब सुदामा से कहते हैं कि "महाराज से मिलने जाते हो लेकिन जब तक हम लोगों को कुछ रिश्वत नही दोगे तब तक महाराज से मिलने नही जाने पाओगे।" यह व्यंग्य युग सापेक्ष हैं। दफ्तर में बडे साहब से मिलने के लिए पहले "घूस" देना जरूरी हैं।

" अरे कुछ खुरचन का सिलसिला भी हैं या यो ही मिलने चला आया। " [२]

परसाई जी के लेखन-यात्रा ने ढेर सारे पडाव देखे हैं। लोगों को ईमानदारी से जीना जैसे अपने ही पाँव पर पत्थर गिराने के समान लग रहा हैं। जन्म से कोई बुरा नही होता, उसे समाज या व्यवस्था बुराई के मार्ग पर चलने को मजबूर कर देती हैं। जो लोग ईमानदारी से अपनी रोजी-रोटी कमा लेते हैं, उन्हे यह व्यवस्था बेईमानी की राह पर ढ़केल देती हैं। राध्येशाम ने अपनी दुकान के ब्रिक्री का सही हिसाब रखकर उसे दफ्तर ले गया लेकिन उस दफ्तर के बाबू साहब ने उस हिसाब को झूठा ठहराया। तब उस सच्चे हिसाब को सच्चा मनवाने को घूस देनी पडी। तब राध्येश्याम अपनी ईमानदारी पर व्यंग्य कसता हुआ कहता हैं ; --

" मैं भी अब झूठा हिसाब रखूँगा। उसे घूस देकर सच्चा बनवा लिया करूँगा। सचाई के लिए घुस देने की अपेक्षा यह ज्यादा अच्छा हैं कि झूठ के लिए घूस दूँ। इतना मँहगा ईमान अपनी हैसियत के बाहर हैं। इससे तो बेईमानी सस्ती पड़ेगी। " [३]

---

१ "सुनो भाई साधो", (मक्खी मार सप्ताह), पृ॰१२।

२ "जैसे उनके दिन फिरे", (सुदामा के चावल), पृ॰३५।

३ "पगड़डियों का जमाना", पृ॰७७।

प्रशासनिक अफसर आज आदर्शहीन बन गये हैं। सरे आम अनैतिक आचरण कर रहे हैं और कानून उनकी ही हिफाजत करता है। अनैतिक आचरण करके बहुत सम्पत्ति इकठ्ठा करके ऐश-ओ-आराम की जीन्दगी गुजार रहे हैं। इसीलिए परसाई जी बेईमानी की जीन्दगी गुजारनेवाले भ्रष्ट आचरण से सम्पत्ति इकठ्ठा करनेवाले अफसरों का पर्दाफाश करते हुए लिखते हैं ; —

> " पर तरह तरह के जादू तो हो रहे हैं। वही क्यों नही होता ? अफसर के इतने बडे मकान बन जाते हैं कि वह राष्ट्रपति को किराये पर देने का हौसला रखता हैं। किस जादू से गोदाम में रखे गेहूँ का हर दाना सोने का हो गया ? इसे बो दिया जायेगा, तो फिर सोने की फसल कट जायेगी। " [१]

भ्रष्टाचार आज हर एक क्षेत्र में पनप रहा हैं। भ्रष्टाचार को लोग शिष्टाचार में बदल रहे हैं। प्रशासन क्षेत्र में घूस लिये और दिये बिना कोई काम ही नही बनता। प्रशासनिक कर्मचारियों का भ्रष्टाचार रोकने के लिए सिर्फ उपदेश, भाषणों, सदाचार समितियाँ, निगरानी आयोग निर्माण करने से कर्मचारी सदाचारी नहीं बनेंगे, तो कर्मचारियों के आर्थिक स्थिति में सुधार करना चाहिए, उन्हे आर्थिक सुरक्षा देनी चाहिए तभी वे भ्रष्टाचार से विमुख हो सकते हैं। अन्यतः सदाचार का ताबीज बाँधे जो कर्मचारी महिने के दो तारीख को घूस लेने इन्कार कर देता हैं, वही कर्मचारी महीने के अंत में घूस लेते वक्त पकडा जाता हैं ; —

> " ताबीज में से स्वर निकल रहे थे — "अरे, आज इकतीस हैं। आज तो ले, ले। " [२]

भरतीय पुलिस भ्रष्टाचारी क्यो बनी ? तथा वे अधिक तनख्वाह के लिए हडताल क्यों नही करती ? इसके सही कारण पर प्रकाश डालते हुए परसाई जी लिखते हैं ; —

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम, वे और भीड), पृ॰१०।

२ "सदाचार का ताबीज", पृ॰२०।

" तनखा का रजिस्टर देखा, तो सब समझ गए। .... हमारे यहाँ सिपाही को सौ और इंस्पेक्टर को दो सौ देते हैं तो वे चौबीस घंटे जुर्म की तलाश करते हैं। " [१]

"इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर" इस व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने अपने देश की पुलिस सिस्टम पर करारा व्यंग्य प्रहार किया हैं। पुलिस की काली करतुतों को बेपर्दा कर रखा हैं। लोगों को हर वक्त गाली देना, पब्लीक पर मनचाहे अत्याचार करना, वर्तमान सरकार की विरोधी राजनीतिवाले व्यक्ति या मुजरीम को जादह से जादह सजा देना, राजनीति का पुलिस सिस्टम पर बढता दबाव, झूठे गवाह, रिपोर्ट आदि सारे पुलिस के कारनामों को परसाई जी ने बेपर्दा कर दिया हैं। सच बोले तो भी मार पडती हैं और झूठ बोले तो भी। व्यथा की दोहरी मार को पुलिस भी प्रोत्साहन दे रही हैं। पुलिस की काली करतुतों का जिक्र करना तो मुश्किल हैं। रक्षक और भक्षक के बीच कोई अंतर समझ में नही आ रहा हैं। भारत की पुलिस तस्करों, चोर, डाकू, लुटेरों पर अपनी अहिंसक लाठी नही बरसाती, वह तो सीधी राह से चलनेवाले जन साधारण के पीठ पर अपना डंडा चलाती हैं। ऐसे ही पुलिस अफसरों का आज देश में जय-जयकार हो रहा हैं। इंस्पेक्टर मतादीन ने तो चाँद पर क्रांतीकारी परिवर्तन कर दिया। इंस्पेक्टर मातादीन ने पुलिस की सारी सच्चाईयों को पीसकर पूरे डिपार्टमेन्ट को पिलाया। ऐसे ही पुलिस अफसरों का जयजयकार हो रहा हैं ; —

" एक दिन मातादीन जी का सार्वजनीक अभिनंदन किया गया। वे फूलों से लदे खुली जीप पर बैठे थे। आस-पास जय-जयकार करते हजारों लोग। वे हाथ जोडकर अपने गृहमंत्री की स्टाईल में जवाब दे रहे थे। " [२]

हर जगह बदबू हैं, अपने देश की पुलिस व्यवस्था अपने आप में एक मिसाल हैं। बेकसूर इस देश में ज्यादा मारे जाते हैं और कसुरवार पुलिस के डण्डे

---

१ "अपनी अपनी बीमारी", (इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर), पृ॰८३।

२ — वही — पृ॰८६।

के नीचे आराम की ज़िन्दगी जी रहे हैं। डर उन्ही को है जो इन्सानियत की राह पर चल रहे हैं। "जूठन चुराकर खानेवाले घटिया कुत्ते ही पिट रहे हैं। १० किलो अनाज चुरानेवाला जेल जा रहा है, और १० ट्रक चोरी से बेचनेवाला अटारी में बैठके रहता है। पाँच रुपये घूसवाला पकड़ा जाता है, पर पाँच लाखवाला पकड़नेवाले को "डिसमिस करा देता है।" यह आज की स्थिति है। इंस्पेक्टर मातादीन का भाषण राजनीतिज्ञों जैसा है।

पुलिस की काली करतूतों को बेपर्दा करके परसाई जी ने पुलिस विभाग और उसकी कार्य पध्दति पर प्रकाश डाला है। जब चाँद के निवासी भारत सरकार से एक पुलिस प्रशिक्षक की माँग करते हैं तब इंस्पेक्टर मातादीन पुलिस केस की उलझन को भारतीय तरीके से सुलझाने का गुरु मंत्र चाँद के पुलिस को सिखाते हैं। पुलिस के मानवतावाद की व्याख्या परसाई जी ने मातादीन के मुँह से ही स्पष्ट की है ; —

> " देखो, आदमी मारा गया है, तो यह पक्का है कि किसी ने उसे जरूर मारा। कोई कातिल है। किसको सजा होनी है। सवाल है — किसको सजा होनी है ? पुलिस के लिए यह सवाल इतना महत्व नही रखता जितना यह सवाल कि जुर्म किस पर साबित हो सकता है या किस पर साबित होना चाहिए ? कत्ल हुआ है, तो किसी मनुष्य को सजा होगी ही। मारनेवाले को होती है या बेकसूर को — यह अपने सोचने की बात नही है। मनुष्य-मनुष्य सब बराबर हैं। सबमें उसी परमात्मा का अंश है। हम भेदभाव नही करते। यह पुलिस का मानवतावाद है। "[१]

वाह ! मानवतावाद की इतनी कटु व्याख्या जो आम आदमी के समझ के बाहर है, जिसे परसाई जी ने जन सामान्य को समझाया है। व्यंग्यकार का जीवन एक गहन, गम्भीर, ईमानदार, सत्यवादी व्यक्ति का जीवन दर्शन है, जो हर विद्रूपमय विसंगति का पर्दाफाश करके समाज के उत्तरदायित्व का फर्ज

---

१ "अपनी अपनी बीमारी", (इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर), पृ.८५।

अदायगी करता है। परसाई जी में अनुभूति तथा चिन्तन का सम्मिलित तिखापन मौजूद है। उन्हे जहाँ भी शोषण, मक्कारी, विसंगति दिखाई देती है, वहाँ वे व्यंग्य का अस्त्र लेकर टूट पड़ते है। परसाई जी ने राजनीति की विड़म्बनाओं पर व्यंग्य कसा है। नेताओं के बहुरूपियेपन का पर्दाफाश करके जनता की विड़म्बना को बहुत ही करुण ढंग से उभारा है। उन्होने स्वदेशी शासकों की हठधर्मिता, कथनी और करनी के अन्तर को देखा। "हम, वे और भीड़" इस निबंध के प्रारम्भ में ही परसाई जी ने बताया है कि अपने यहाँ धोखे की एक लम्बी परम्परा है, धोखा, जो हमे विरासत में मिला था, हम अपने बच्चों को दे रहे है। हम अपने बच्चों को कोई वर्तमान भविष्य में उनका जीवन सजाने, सँवारनेवाली चीज नही दे रहे है। इसी की ओर संकेत करते हुए परसाई जी लिखते है ; —

> "बीते हुए की बदरंग मुरझायी तसवीर है ये। आगत की कोई चमकीली तसवीर हम तुम्हे नही दे सकते। हम उसमें खुद धोखा खा चुके है, और खाते रहे है। देनेवाले हमे भी तो हर साल के शुरू में रंगीन तसवीर, देते है कि लो अभागों, रोओं मत। आगामी साल की यह रंगीन तसवीर है। मगर वह कच्चे रंग की होती है। किसी दिन तुम इन इन बदरंग तसवीरों को हमारे सामने ही फाड़कर फेंक दोगे और हमारे मुँह पर थूकोगे।" [१]

झूठे विश्वास और परम्पराओं के प्रति विद्रोह पैदा करना परसाई जी का लक्ष्य रहा है। लोगों को गलती का अहसास करवाना, प्रतिक्रियाहीन समाज में प्रतिक्रिया की चेतना फूंकना परसाई जी का लक्ष्य रहा है। व्यंग्य और व्यंग्यकार का यह उत्तरदायित्व है कि वह अपने समय और युग की समस्त विसंगतियों की आलोचना करे। परसाई जी ने अपने युग के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, वैयक्तिक एवं सामुहिक दुर्बलताओं और नष्ट होनेवाले महान मुल्यों की पीडा को स्वर देने की ईमानदार कोशिश की है।

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम, वे और भीड़), पृ०९।

राजनीति में आज ऐसे नेता रहे हैं जो गांधीजी तथा नेहरू का नाम लेकर हमेशा अपने स्वार्थ का काम कर रहे हैं। ऐसे भ्रष्टाचारियों के चेहरों के नकाब उतारने का काम परसाई जी ने अपने रचनाओं में किया है। गांधी जी और नेहरू के आदर्श, सिध्दान्त और नीति तत्व उन्हे मालुम नही हैं और अपने आपको सच्चे कांग्रेसी कहकर आजीवन सत्ता और पदों से चिपके रहनेवाले, ऐसे ढोंगी, सम्प्रदायवाद, ब्राम्हणवाद, हिन्दु-मुस्लिम आदि जात-बिरादरी के नाम पर चुनाव जीतनेवाले नेताओं की "सज्जन, दुर्जन और कांग्रेसजन" नामक व्यंग्य निबंध में पोल खोली हैं ; —

" मैने कहा, "आप बताइए कि हमने तटस्थ विदेशनीति क्यो अपनायी और उससे हमें कौन-से फायदे हुए ? "
..... वे झटके से उठे और तकिये पर खड़े हो गये। दोनो भुजाएँ उठाकर बड़े जोर से चिल्लाये, "महात्मा गांधी की जय! पण्डित नेहरू की जय!"
दूसरा सवाल पूछिए!"
मेरा दूसरा सवाल था, "भैया सॉब, सार्वजनीक क्षेत्र के उद्योगों का राष्ट्र के विकास में क्या महत्व हैं और अब तक की उपलब्धियाँ और भविष्य की आशाएँ क्या हैं ? "
वे फिर सोचने लगे। सोचते सोचते उठे और कूदकर टेबिल पर चढ गये। हाथ ऊँचे करके फिर आवाज लगाई, "पण्डित नेहरू जिन्दाबाद।" [१]

"नया खून पूराना खून" नामक व्यंग्य निंबंध में परसाई जी ने राजनीति के क्षेत्र के बुढे, पदलोलुप नेताओं की खाल उधेड दी हैं। जो चाहते हैं कि जीवन के अंत तक पद पर रहे और पद पर ही मरे। हर समय चुनाव के वक्त राजनीति में ऐसे बुढे नेता लोग मौजुद हैं जो युवकों को आगे आने नही देते। कहते हैं कि "युवको" के सामने तो पूरी जीन्दगी पड़ी हैं, कभी भी पद पर बैठ सकते हैं। ऐसे बुढे, पदलोलुप, स्वार्थी नेताओं पर व्यंग्य का प्रहार करते हुए परसाई जी लिखते है ; —

---

१ "पगडडियों का जमाना", (सज्जन, दुर्जन और कांग्रेसजन), पृ॰२४, २५।

" मैं उस दिन की कल्पना करके प्रसन्न हो उठता हूँ जब सचिवालय और विधान परिषदों के सामने एम्बुलेंस गाडियाँ खड़ी रहेंगी और राजकीय नेता स्ट्रेचर पर भीतर ले जाएंगे, जनता के प्रति अपने कर्तव्य पूरे करने।"[१]

देश में आज ऐसे ही नेताओं की भरमार दिखाई देती है। अँगूठा उठाते हैं, फिर भी सत्ता में रहना चाहते हैं। ऐसे दलबदलु, अवसर को पकड़नेवाले, दुमुँहा प्रवृत्ति का परसाई जी ने पर्दाफाश किया है। इन छोटे बड़े नेताओं की पुंगी उसी समय बजती है, जिस समय इसके हाथ में सत्ता होती है, अन्तत: बाकी समय वे सिर्फ खाली पोल होती हैं, उसमें स्वर नहीं होता। —

" राजनैतिक अवसरवाद की पुंगी जब उसी फेफड़े की साँस से बजती हैं, जिसमें सत्ता की दम हो, तब मतवादी सिध्दान्त और आईडियालॉजी का कोई उपयोग नहीं रहता। " [२]

जिनके हाथ में सत्ता होती है, वे सत्ता की धाक आम आदमी को दिखाते रहते हैं। अपने विरोधी दल के लोगों का कोई काम नहीं बनने देते। हर एक नेता अपने झंडे के तले आम आदमी को गुमराह कर रहा है, यह आज की राजकीय स्थिति है। शुध्द और तत्वनिष्ठ राजनीति का अभाव है, जिसके कारण अपने देश में सुधार होना संभव नहीं है। गांधीजी का जमाना गया, जब उपवास से सुधार होता था, अब खाने से सुधार होता है, यानी अब हरामखोरी से तरक्की होती है।

देश को आजादी मिलकर पैतालीस बरस से ज्यादा दिन हो गए। लेकिन नेता लोग चुनाव जीतकर संसद में मंत्री बनने के बाद आये दिन उद्घाटन, विमोचन समारोह में गुजार रहे हैं, जिससे जनता की समस्याएं हल नहीं हो रही हैं। ऐसे मंत्री, नेता पर व्यंग्य का प्रहार करते हुए परसाई जी लिखते हैं ; —

---

१ "सुनो भाई साधों", (नया खून, पूराना खून), पृ•४।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (राजनैतिक पुंगी), पृ•९८।

" तीस सालों से मंत्री लोग यही कर रहे हैं — उद्घाटन, विमोचन पुल का उद्घाटन मंत्री न करे तो वह गीर जाये। नहर का उद्घाटन मंत्री न करे तो वह सूख जाये। धोबी सम्मेलन का उद्घाटन मंत्री न करे तो धोबी कपड़ा धोना भूल जाये। " [१]

नेता लोग तो उद्घाटन विमोचन में वक्त यु ही बिता रहे हैं, साथ ही वे युवा वर्ग को भी गुमराह कर रहे हैं ताकि युवा वर्ग राजनीति में शरिक न हो जिससे वे जीवन के अंत तक नेता बने पद से चिपके रहे। आज देश का हर एक युवक गला फाड़कर क्रांति का मसीहा बनने का ढोंग रचाता हैं पर उसकी क्रांतिकारी मुद्रा को आज का नेता पहचान लेता है, इसलिए वह युवा वर्ग को सीख देता हैं ; —

" आप युवक हैं, क्रांतिकारी हैं। मै आपके क्रांतिकारी आन्दोलनों को बड़े ध्यान से देख रहा हूँ। जब तक आप बस-कंडक्टर और सिनेमा-गेटकीपर के विरुध्द क्रांतिकारी आंदोलन करते रहेंगे, हम सुरक्षित रहेंगे। मैं आपसे अपील करता हूँ कि इन्ही के खिलाफ आन्दोलन करते रहे। जिस दिन आप बुनियादी परिवर्तन के लिए आन्दोलन करेंगे, उस दिन हम उखड़ जाएंगे। इसलिए आप सच्चे क्रांतिकारी बनों। सच्चा क्रांतिकारी कंडक्टर, गेटकीपर, चपरासी वगैरह से ही संघर्ष करता हैं। " [२]

परसाई जी ने युवकों के मुँह पर करारा तमाचा मारा हैं। जिस उम्र में युवकों को शैक्षणिक योग्यताएँ और तरक्की हासिल करनी चाहिए उसी उम्र में वे अपनी शक्ति को तोड-फोड़ और आवारागर्दी में लगा रहे हैं। अगर देश के युवकों ने सही अवसर पर क्रांति और आन्दोलन न किये तो वर्तमान देश में कोई सुधार होना संभव नही हैं और शोषक वर्ग बड़े आराम से शोषण करते रहेंगे।

---

१ "पाखण्ड का अध्यात्म", (हीनता का अतिराष्ट्रवाद), पृ॰७०।

२ "काग भगोडा", (एक दिक्षांत भाषण), पृ॰४५।

आज हर एक क्षेत्र में अन्याय, अत्याचार, विसंगति दिखाई देती हैं। नेता लोग पथभ्रष्ट हो गए हैं। उन्होने गांधीजी के सत्य, अहिंसा, त्याग जैसे आदेशों की हत्या ही की हैं। ऐसे नेताओं पर व्यंग्य का मार्मिक प्रहार करते हुए परसाई जी लिखते हैं ; —

" आपके नाम पर सडके हैं -- महात्मा गांधी मार्ग, गांधी पथ। इन पर हमारे नेता चलते हैं। कौन कह सकता हैं कि इन्होने आपका मार्ग छोड़ दिया। वे तो रोज महात्मा गांधी मार्ग पर चलते हैं। " [१]

अपना देश धर्म निरपेक्ष हैं और ऐसे धर्म निरपेक्ष राष्ट्र को कुछ राजनीतिक पार्टीयाँ धर्म प्रधान बनाने की कोशिश में लगी हैं ऐसे भारतीय जनता पार्टी की तथा गोडसे को राष्ट्रीय हिरो बनाने की इच्छा रखनेवालों की परसाई जी ने अपने व्यंग्य निबंध "महात्मा गांधी को चिठ्ठी पहूँचे" में निन्दा की हैं।

परसाई जी ने राष्ट्रीय समस्याओं के अतिरिक्त आंतरराष्ट्रीय समस्याओं की ओर भी संकेत किया हैं। "खुदा की चिड़ियां" और "मानव आत्मा और अमेरिकी हूटर" नामक व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने अमरिका के नीति की कटु आलोचना की हैं, जो छोटे राष्ट्रों को अपने दबाव में रखना चाहती हैं और उन राष्ट्रों में अमानवीय प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देती रहती हैं। पाकिस्तान एक दहशतवादी राष्ट्र हैं जिसे परसाई जी ने गुंडे की उपमा दी हैं। जो अमरिका के बहकावे में आ कर भारत में आतंक फैलाता हैं। कश्मीर भारत का अविभाज्य अंग हैं लेकिन अमरिका के बहकावे में आकर भारत में आतंक फैलाता रहता हैं, जिसपर प्रकाश डालते हुए परसाई लिखते हैं ; —

" पाकिस्तान ने लगातार, फौजी तानाशाही के कारण अपने को एक पेशेवर गुंडा बना दिया हैं। उसे पैसे दे दो, लाठी दे दो और कह दो कि जा, उस शरीफ आदमी को पीछे से लाठी मार आ। गुंडा बार-बार पिटता हैं मगर पेशा नही छोडता। पेट का सवाल हैं। अमरिका पाकिस्तान को फिर पैसा और हाथियार दे रहा हैं। आसपास के शरीफों को सावध हो जाना चाहिए। " [२]

---

१ "पाखण्ड का अध्यात्म", (महात्मा गांधी को चिठ्ठी पहूँचे), पृ.२७।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (मानव आत्मा और अमेरिकी हूटर), पृ.८५।

हमें पाकिस्तान से सावध रहना चाहिए पर अपने देश में लोग नेता बने बगैर कोई राष्ट्रीय कार्य नही कर सकते, लोगों में देश प्रेम निर्माण नही कर सकते इसलिए नेता बनना आवश्यक चीज बन गई हैं। "असिस्टेंट लोकनायक" इस व्यंग्य निबंध में परसाई कहते हैं कि स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद अपने देश में राजनीतिक नेता का चरित्र कितना गिरा हुआ हैं, इसका उत्तम उदाहरण वर्तमान युग के नेता हैं। स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद नेताओं ने समस्याएँ खुद निर्मान की और उसका हल करने का प्रयास भी वे ही कर रहे हैं, जिससे वे अपने नेतागीरी का दिखावा या इस्तीहार करते रहते हैं और जनता की नजरों में धूल झोंकते रहते हैं। राजनीतिक लोग अपने किसी संबंधीत व्यक्ति की राजनीति में इमेज बनाने के लिए खुद समस्याओं का निर्माण करते रहते हैं और उसी व्यक्ति के द्वारा समस्या का हल भी किया जाता हैं। अब कुछ दिन पहले साखर कारखानदारी के चुनाव हुओ। जिन जिन साखर सम्राटों ने ये चुनाव जीते उन्होने अपने इस्तीहार के साथ अपने बेटों का भी फोटो चिपका दिया और लोगों को समझाया कि आज तक हम आपके नेता थे लेकिन वर्तमान भविष्य में आपके नेता हमारे बेटे रहेंगे। ऐसे नेता का अपने ही लोगों द्वारा अभिनंदन किया जाता हैं, उसे मोटर कार प्रदान की जाती हैं और जन साधारणों को बताया जाता हैं कि यहाँ कोई बहुत बड़ा राजनीतिक नेता रहता हैं। ऐसे नेता का यथार्थ रूप लोगों के सामने रखते हुए परसाई उस पर चंचला नारी का आरोप करते हैं, जो चाहती हैं कि सारा शहर उस पर जान दे।

> "इसके लिए वह मुहल्ले के एक छोकरे को एक रुपया देकर कहती हैं कि तू मुझे सडक पर छेडना। छोकरा छेडेगा तो हल्ला होगा और शहर में बात फैलेगी कि हाँ यार, यहाँ कोई "मारू" रहती हैं, उस मुहल्ले में, गजब की हैं यारों।" [१]

राजनीति में ज्यों त्यो करके इमेज बनाई जाती हैं और सत्ता भी हासिल की जाती हैं, इसीलिए आज सभी नेता कुर्सी के पिछे लगे हुओ हैं। कुर्सी

---

१ "पाखण्ड का अध्यात्मं", (असिस्टेंट लोकनायक), पृ·३४।

के पिछे इसलिये कि खाने को मिलता हैं। कुर्सी के लिए एक गुट से संबंध तोडकर दूसरे पक्ष से कैसे जुड जाते हैं इसका उत्तम उदाहरण वर्तमान युग के नेता हैं। जोड-तोड की नीति में आज का नेता माहिर हैं, उस वक्त उसे अपने मुल्यों की, जनता को दिये हुये वचनों की याद नही रहती, उन्हे तो बस किसी भी हालत में कुर्सी हासिल करना हैं। अपने देश में कुर्सी के लिए चुनाव लडनेवाले नेताओं की एक लम्बी परम्परा हैं। इन्हे अपने देश से प्रेम नहीं, कुर्सी से प्रेम हो गया हैं और जुदाई का गम सह नही सकते। ऐसे चारित्र्यहीन, मुल्य-हिन, पदलोलुप, दलबदलु, स्वार्थी, सत्ता के लिए तिकड़मबाजी करनेवाले नेताओं का यथार्थ रूप परसाई जी ने लोगों के सामने रखकर उनपर सहज भाव से मर्मस्पर्शी व्यंग्य प्रहार "दौड प्रधानमंत्री पद की" इस व्यंग्य निबंध में किया हुआ दिखाई देता हैं।

" देवराज अर्स ने कहा हैं -- हमारी पार्टी चरणसिंह को प्रधानमंत्री बनाने को वचनबध्द नही हैं। बाबूजी उस विवाहोत्सुक आदमी की तरह चौकन्ने हैं, जो देखता रहता हैं कि किस लडकी की सगाई टूट रही हैं। बाबूजी ने झट अर्स की तरफ संदेशा भेजा -- अब तुम्हारी चरणसिंह से टूट गयी हैं, तो आओ अपनी बात हो जाय। तुम क्वांरी तो रहोगी नही। किसी को तो करना हैं। मैं क्या बुरा हूँ।" [१]

परसाई जी ने तो नेताओं के चेहरे का नकाब ही हटा दिया हैं, जिससे उनका वास्तविक रूप लोगों के सामने आया। बेपर्दा कर दिया हैं सब को। परसाई जी ने स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के देश की स्थिति को सही मायने में पहचाना हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में व्यापारी, चोर, डाकु, कालाबाजारीयों, मुनाफाखोरों ने देश की राजनीति पर अपना अधिकार रखा हुआ हैं और शोषण की परम्परा कायम रखी और अब चाहते हैं कि देश की सत्ता, नेतृत्व अपने हाथ में आये। इस देश के नेताओं ने जनतंत्र की लगातार हत्या ही की हैं। शोषण की परम्परा कायम रखने के लिए नेताओं ने "मानव-सेवा-संघ"

---

१ "पाखण्ड का अध्यात्म", (दौड प्रधानमंत्री पद की), पृ.२२।

जैसी संस्थाएं खोली। यह सब दिखावा किया जाता है कि असहाय कल्यान निधि से हम दीन-दलित जनता का उद्धार कर रहे हैं। असहाय कल्यान निधि केवल नाम रहता है, उससे एकत्र की हुई धन राशि सम्पन्न लोगों और खद्दरधारियों के ही काम आती है। देश की प्रगति के नाम हजारों खद्दरधारी पदलोलुपता के दलदल में इस देश को खोखला कर रहे हैं। नेता बनना, सत्ता हासिल करने के सही उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए परसाई लिखते हैं ; —

> " बस, मैं ने उसी दिन "मानव-सेवा-संघ" खोल दिया। प्रचार कर दिया कि मानव-मात्र की सेवा करने का बीडा हमने उठाया है। हमें समाज की उन्नत्ति करना है। देश को आगे बढ़ाना है। गरीबों, भूखों, नंगों, अपाहिजों की हमें सहायता करनी है। हर व्यक्ति हमारे इस पुण्य-कार्य में हाथ बँटाये ; हमे मानव-सेवा के लिए चन्दा दे। .... पिताजी, राज्य का आधार धन है। राजा को प्रजा से धन वसूल करने की विद्या आनी चाहिए। प्रजा से प्रसन्नतापूर्वक धन खींच लेना राजा का आवश्यक गुण है। उसे बिना नश्तर लगाये खून निकालना आना चाहिए। मुझमें यह गुण है ; इसलिए मैं ही राजगद्दी का अधिकारी हूँ। " [१]

जनता से चन्दा वसूल करके नेताओं ने सत्ता तो अपने हाथ में रखी ही है पर शासन तिजोरी के पैसों का अपने ही स्वार्थ के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। मुघल साम्राज्य में शहाजहाँ ने अपनी प्रिया की याद में जनता के पैसों से ताजमहल बनवा लिया था पर आज के छोटे-बडे राजा भी यही कर रहे हैं। कार्पोरेशन का सदस्य घर के सामने सीमेण्ट की सड़क बनवा लेता है, बिजली का खम्बा लगवा लेता है, जिससे प्रिया अँधेरे से न डरे। आज हर मुमताज उम्मीद लगाये बैठी है कि चुनाव में हमारे शाहजहाँ जीतनेवाले हैं और आगामी मंत्रीमण्डल के पुनर्गठन में उन्हे मंत्रीमण्डल में जगह दी जानेवाली है। यह आज के युग की स्थिति है, जिसे परसाई ने सही मायने में पहचाना है।

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", पृ॰१३।

आज के युग में नेता जनता से वोट पाने और चुनाव में विजयी होने के लिए अपना रंग-रूप, चाल-ढाल सभी में बदलाव करता है। चुनाव के वक्त ऊँची जाति का उम्मीदवार किसान के घर भोजन करता है जिससे किसान गांव में यह बात फैलाता है कि "इतने बड़े आदमी होकर भी घमण्ड बिलकुल नही है। वह भेडिया जैसा व्यवहार करता है, जैसे भेडिया अपने शिकार के बाद जूठन खाने दो-चार सियार रखता है, जो हड्डियों में लगे मांस को खाने के बाद हुआ हुआ करके भेडिये की जय-जयकार बोलते हैं। ठीक यही हाल आज के राजनेताओं और उनके आस-पास दुम हिलानेवाले चापलूसों का है, जो इन राजनीतिक भेडियों की जय-जयकार करके समाज को गन्दा कर रहे हैं। इसी विसंगति को परसाई ने व्यंग्य का लक्ष्य बनाकर सामने रखा है।

> " हर भेडिये के आस-पास दो-चार सियार रहते ही हैं। जब भेडिया अपना शिकार खा लेता है, तब ये सियार हड्डियों में लगे मांस को कुतर खाते हैं, और हड्डियाँ चूसते रहते हैं। ये भेडिये के आस-पास दुम हिलाकर चलते हैं, उस की सेवा करते हैं और मौके-बेमौके "हुआँ-हुआ" चिल्लाकर उसकी जय बोलते हैं। " [१]

अब, मांस खाने से शरीर में गर्मी पैदा होती है, और उस गर्मी को नरमी बनाने और एक चीज की जरूरत होती है, वो है औरत। औरत तो नेताओं के लिए चलती-फिरती वेश्या है, जिसका जब चाहा भोग किया जाता है। देश में नारियों के साथ "रेप" होने की खबरे अखबारों में सुर्खियों में छापी जाती हैं और गुनहगार जेल से रीहा भी हो जाते हैं। देश में नेता नारी स्वतंत्रता की लडाई राजनैतिक स्तर पर तो लडी जाती है लेकिन उसके साथ न्याय नही होता, अन्याय, अत्याचार, जोर-जबरदस्ती होती रहती है। नेता कितना भी बडा क्यों न हो वह नारी के मोहपाश में फस ही जाता है। वह समाज सेवा की कितनी ही बडी तपस्या करे पर नारी के प्रति आसक्त होकर अपने चरित्र को कलुषित करता ही रहता है। ऐसे नेताओं का यथार्थ रूप "मेनका का तपोभंग"

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (भेडे और भेडिये), पृ.२२।

इस व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने जनता के सामने रखा है।

" मुझे गलत समझा गया। मैं ने स्वर्ग पाने के लिए, इन्द्रासन पाने के लिए तपस्या नही की। मुझे यह कुछ नही चाहिए। मैं तो तुम्हारे लिए तपस्या कर रहा था, मेरी मेनका रानी। " [१]

देश के नेता औरत के बाहु-पाश में और शराब के नशे में बेहोश बनकर अपने चरित्र को कलुषित तो कर रहे हैं पर वे जनता के साथ भी गद्दारी कर रहे हैं। जनता को धोखा दे जाते हैं, सामान्य लोगों का कोई काम बिना पैसे लिये नही किया जाता। आज के युग में शोषित कितना भी गरीब क्यों न हो फिर भी उसका शोषण आज के प्रतिष्ठित, सभ्य नेता से होता ही रहता है, जिस पर परसाई ने व्यंग्य का प्रहार किया है। जिस तरह सुदामा के चावल की तरह आज के प्रतिष्ठित लोग गरीबों का खून चूसते ही रहते हैं तथा देश के सामान्य लोग यह भी जान गये हैं कि राजपुरुष बिना भेंट लिये किसी का कोई काम नही करते ;

" दिन बन्धु एक दीन के चावल खाते हूए। " [२]

तथा ;

" ब्राम्हणी जानती थी की राजपुरुष बिना भेंट लिये किसी का कोई काम नही करते। " [३]

समाज कितना ही प्रगत हो, समाज सुधरे या न सुधरे किन्तु शोषण की परम्परा कायम रखनेवालों की परसाई जी ने पोल खोली है। देश के आजादी के लिए भगतसिंग, राजगुरु, चापेकर बन्धु, सावरकर जैसे वीर हँसते हँसते फाँसी के तख्ते पर चढ गये लेकिन जिन्होने आजादी की लडाई में एक-दो बार जेल जाने की औपचारिकता निभायी वे अब इस देश के राजनीति के बडे

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (मेनका का तपोभंग), पृ.६३।

२ "जैसे उनके दिन फिरे", (सुदामा के चावल), पृ.३२।

३ —— वही ——

बडे पदों की मांग कर रहे हैं। "लंका विजय के बाद" बन्दरों ने अयोध्या में अपने अपने कर्म और योग्यता के अनुसार पदों की मांग की परन्तु राजा ने उन्हे सामान्य नागरिकों की तरह श्रम करने को कहा था। लेकिन वही बात आज के परिवेश में बिलकुल विरोधी लगती हैं। आजादी के बाद हजारों लोग पद और शासन से मिलनेवाले ईमान के लिए पैन्ट निकालकर खद्दरधारी बन गये। जिन लोगों ने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों को दाँव पर लगाया था वे तो रसातल में मिल गये और इन झुठे खद्दरधारियों ने देश के शासन तन्त्र पर अपना अधिकार कायम कर लिया हैं। इन स्वार्थी, खद्दरधारी, पदलोलुप, स्वातंत्र्य-सेनानीयों पर परसाई जी ने बड़ा ही मार्मिक व्यंग्य प्रहार किया हैं। --

> " महाराज, हम श्रम नही कर सकते। आप की "जय" बोलने से अधिकार श्रम हम से नही बनता। हमने संग्राम में पर्याप्त श्रम कर लिया। .... ये हमारे शरीर के घाव हमारी योग्यता के प्रमाण हैं। इन घावों से ही हमारी योग्यता आँकी जाये। " [१]

एक वानर अपने घर में तलवार से स्वयं ही अपने शरीर पर घाव बना रहा था, उसकी स्त्री घबरा कर बोली, "नाथ, वह क्या कर रहे हो ? वानर ने कहा, --

> "प्रिये शरीर में घाव बना रहा हूँ। आज-कल घाव गिन कर पद दिये जा रहे हैं। राम-रावण संग्राम के समय तो भाग कर वन में छिप गया था। .... हमारे तन पर एक भी घाव नही था, इसलिये हमें सामान्य परिचायक का पद भी नही मिलता। अब हम कोग स्वयं घाव बना रहे हैं। " [२]

ऐसे झूठे स्वातंत्र्य सेनानीयों ने झूठे प्रमाण-पत्र हासिल करके पूरी तरह से शासन से लाभ उठाया और जीवन के अन्त तक उन्हे पेन्शन के रूप में कुछ पूँजी

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (लंका विजय के बाद), पृ.५५।

२ —— वही —— पृ.५६।

भी सरकार की ओर से मिल रही हैं, और सच्चे देशभक्त अपने हाथों में मुँह छिपाये बैठे हैं। वे तो रसातल में मिल गये।

देशभक्त वीरों ने आजादी की लडाई लडी और देश को आजाद किया पर आजादी के इतने साल गुजर जाने के बाद भी आज देश का सामान्य आदमी सुखी नहीं हैं, इसका प्रमुख कारण यह हैं कि उसे सुखी बनाने के सही प्रयास इस देश के कर्णधारों ने नहीं किया। आजादी के बाद देश के नेता, प्रशासन के चपरासी से लेकर बडे अधिकारी, कालाबाजारियों, मुनाफाखोर, स्मगलर आदि सभी ने मिलकर इस देश का शोषण किया। सभी रिश्वतखोर, भ्रष्टाचारी बन बैठे और सामान्य आदमी की ओर किसी ने भी ध्यान नहीं दिया। देश की सामान्य जनता से अच्छे अच्छे नारे और सपने जरूर बाँटे गये, पर उनपर अमल नहीं किया गया। स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद देश की सामान्य जनता का किस प्रकार मोहभंग हुआ, इसी की ओर संकेत करते हुए परसाई लिखते हैं ; --

"हमारे बापों से तब कहा जाता था कि आजादी की घास गुलामी के घी से अच्छी होती हैं। हम तब बच्चे थे, मगर हमने भी इसे सुना, समझा और स्वीकारा। .... नारा लगानेवालों से पूछना भूल गये कि कब तक खायेंगे। मगर हमने देखा कि कुछ लोगों ने अपनी काली-काली भैंसे आजादी की घास पर छोड़ दी और घास उनके पेट में जाने लगी। तब भैंसवालों ने उन्हे दूह लिया और दूध का घी बनाकर हमारे सामने ही पीने लगे।" [१]

अपने देश की आजादी अपने आप में एक उलझन हैं, जिसने नैतिकता, कायदे-कानुन आदि सभी का हनन किया हैं। सभी अपने मनचाहे नापाक इरादों से अनैतिक बन बैठे हैं। इस आजादी के कारण गांधीजी के सत्य, अहिंसा, त्याग जैसे तत्वों की हत्या की हैं। कोई सीधे राह से नहीं चलता, सभी पगडंडि पकड़ रहे हैं ; याने इस देश के कायदे-कानुनों की सभी ने हत्या की हैं। इसीकारण देश की आजादी को लक्ष्य करते हुए परसाई जी लिखते हैं ; --

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम, वे और भीड), पृ.१०, ११।

"संविधान में जो मौलिक अधिकार लिखे हैं उनमें एक यह भी हैं, कि भारतीय नागरिक भारत में कही भी जा सकता है। जब वह कही भी जा सकता है, तो बीच सड़क से या दाहिने बाजू से क्यों नही चल सकता ? आखिर यह प्रजातन्त्र हैं। कोई तानाशाही तो है नही। हमें आजादी मिली हैं तो क्या इसलिए कि मनचाहा चल फिर न सके।" [१]

संविधान की सभी ने हत्या कर ली हैं जिसके कारण आज हर एक क्षेत्र में ज्ञानी, बुध्दिजीवी लोक हार रहे हैं और निरक्षर, कम पढ़े, अँगुठा छाप लोक जीत रहे हैं। फर्स्ट क्लास में पास होनेवाला सड़क पर ठोकरे खाता हुआ घूम रहा हैं और तीसरी श्रेणी या भ्रष्ट मार्गों से पास होनेवाला अच्छी नौकरी पाता हैं। योग्य नगर सेवक नगर पालिका का चुनाव हार जाता हैं और निरक्षर लोकसभा में पहूँच जाता हैं। इस विसंगत स्थिति की ओर प्रकाश डालते हुए परसाई लिखते हैं ; —

"जो वस्तुस्थिति हैं, उसे स्विकार करना चाहिए। तुम आज जागे हो ; जब गधे ने गणेश को पाठ्य पुस्तक में से निकाल दिया। मगर यह शीत युध्द कब से चल रहा हैं। जगह जगह गणेश परास्त होता रहा हैं और गधा जीतता रहा हैं। शासन में, शिक्षा में, विश्वविद्यालय में, सार्वजनिक जीवन में सब जगह गणेश हार रहे हैं।" [२]

हर साल जनतंत्र को जिन्दा रखने की स्कीमें बनाते हैं लेकिन कोई स्कीम ठीक से कार्यान्वित नही हो रही हैं। भारत के स्वतंत्रता से लेकर अबतक के नेता जनतंत्र को बचाने के नारे ही लगाते आये हैं। आज सत्तारूढ पार्टी को यह फिक्र खाये जा रही हैं कि जनतंत्र भी बचाना हैं और सरकार भी। इसलिये "राष्ट्रपति शासन" का नारा बुलन्द किया जा रहा हैं। "सफाई सप्ताह" सरकार की ओर से लागु किया जाता हैं किन्तु सफाई सप्ताह कचरे का ढेर दे जाता हैं।

---

१ "सुनों भाई साधो", (बाचे क्यों चले), पृ.६७।

२ "सुनों भाई साधो", (गणेशजी और गधाजी), पृ.२२, २३।

"कन्धे श्रवणकुमार के" प्रस्तुत निबंध में परसाई जी ने नया और पुराना बीच के फर्क को सामने रखा हैं। यह फर्क हमने गलत किताबे पढ़ी इसलिये हैं। हमारी किताबों में, शिष्य पक्षपाती गुरु को अंगुठा काटकर देता था और दोनो "धन्य" कहलाते थे। अब शिष्य उपकुलपति से रिपोर्ट कर देता हैं कि अमुक अधापक शिष्यों के अंगुठे कटवाते हैं। अतः पुरानी पीढ़ी जिसने गलत किताबे पढ़ी वह अपनी गलत मान्यताएं और विश्वासों के लिए नये पीढ़ी को क्यो घिर रही हैं? यह फर्क सभी क्षेत्र में दिखाई देता हैं -- राजनीति, साहित्य, कला, शिक्षा, धर्म आदि। अन्धे बैठे हैं और आँखवाले उन्हे ढो रहे हैं। अपने देश में अब अन्धों ने मंदिर-मसजीद की समस्या खड़ी की हैं। अन्धे काँवडों में बैठे हैं; कोई काँवड मंदिर जा रही हैं तो कोई मसजीद। और हम जैसे युवक उस काँवड को ढो रहे हैं। लेकिन अब कावडवाले कावडे उतरने लगे हैं, अब अन्धे आँखवालों को गुमराह नही कर सकते।

> "ढोनेवालों के मन में शंका पैदा होने लगी हैं। वे झटका देते हैं ..... और ढोनेवाला कहता हैं ..... अपनी शक्ति और जीवन हम अन्धों को ढोने में नही गुजारेंगे। तुम एक जगह बैठो। माला जपों। आदर लो, रक्षण लो। हमें अपनी इच्छा से चलने दो। अनुभव दे दो, दृष्टि मत दो। वह हम कमा लेंगे।" [१]

युवा वर्ग में क्रांतिकारी परिवर्तन लाना परसाई का उद्देश्य रहा हैं और वे अपने उद्देश्य में काफि सफल भी रहे हैं। झूठे विश्वास और परम्पराओं के प्रति विद्रोह निर्मान करना परसाई जी का लक्ष्य रहा हैं। लोगों को गलती का अहसास करवाना, प्रतिक्रियाहीन समाज में प्रतिक्रिया की चेतना फूंकना परसाई का लक्ष्य रहा हैं। जन साधारणों का यह आत्मविश्वास परसाई के व्यंग्य लेखन की सार्थकता हैं। पूँजीवादी वर्ग व्यवस्था को उजागर कर लोगों को सावधान करना परसाई का लक्ष्य रहा हैं जिनमें वे पूर्णतः सफल हैं। अन्धों का यह दुराग्रह अब आँखवालों को गुमराह करने में सफल नही होगा, वे अपने अनुभव से सोच-विचार करने को विवश हैं। लेकिन एक जगह परसाई लिखते हैं ; --

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (कन्धे श्रवणकुमार के), पृ.११३।

"झूठे विश्वास का भी बड़ा बल होता है। उसके टूटने का भी सुख नही, दुःख होता है।" [१]

"जहाँ की जन-चेतना झूठ से ही लगाव लगाये बैठी हो, वहाँ सत्य की प्रतिती करवाना दुष्कर कार्य है।" [२]

देश का हर एक व्यक्ति पीड़ा की टीस का अहसास करता है। व्यक्ति युग के चौराहे पर खड़ा है, जहाँ उसके पास कुंठा के सिवा कुछ नही है। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक जीवन मुल्ये टूट गई है, इससे धर्म का क्षेत्र अछूता नही रहा। आज जीवन मुल्यों में दरार पड़ी है, जिसके कारण आदमी टूटने से नही बचता। रूढ़ी परम्पराओं का पारम्पारिक ठेका अपने हाथ में लेकर वंशानुगत परम्परा को आगे बढ़ाने का मार्गदर्शन करनेवाले ठेकेदार समाज में मौजूद है। यही ठेकदार वर्तमान की मांग को अतित दिखाकर नकार देते है। आदर्श जीवन मुल्यों को पीसकर इन्होने समाज को पिला दिया है।

"लोग कहते है कि आखिर स्थायी मुल्य और शाश्वत परम्परा भी तो कोई चीज है। सही है, पर मूर्खता के सिवाय कोई भी मान्यता शाश्वत नही है। मूर्खता अमर है। वह बार बार मरकर फिर जीवित हो जाती है।" [३]

रूढ़ी परम्पराओं के मूर्खता का खत्म करना दूष्कर कार्य है। इस स्थिति में मुल्यों के प्रति संघर्ष, वर्तमान की मांग के प्रति संघर्ष आज के युवकों को एक चुनौती है। कल आज पर हावी है और वर्तमान दबा-दबा सिसक रहा है पर कौन है जो कल की जंजीर में जकड़े आज को छुड़ा सके। मूर्खता को खत्म करना आसान नही है, परिवर्तन आज के जमाने में एक गाली है, जो इन्सान को एक ही रास्तेपर चलने को मजबूर कर देती है।

---

१ "अपनी अपनी बीमारी", (प्रेम की बिरादरी), पृ.४०।
२ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध," डॉ.शशि मिश्र, १९९२, पृ.१९२।
३ "अपनी अपनी बीमारी", (प्रेम की बिरादरी), पृ.४१।

धर्म के नाम पर ढोंगी साधु संतों ने अपने देश की सामान्य भोली-भाली जनता को हमेशा लुटा हैं। ढोंगी साधुसंत नाटकीय वार्तालाप से अ- आध्यात्मिक ज्ञान के उपदेश देते हैं, जिससे सामान्य लोग प्रभावित होते हैं, वे अपने आपको नीच, पापी मान लेते हैं और साधना मंदीर में आत्मा की ज्योति जगाने के लिए इन ढोंगी साधु-संतों को सुख-सौंदर्य की वस्तूएं, पैसा देने लगते हैं। वे साधु संत सामान्य धार्मिक जनता का मनोविज्ञान जानते हैं और अपने प्रवंचन से संसार में फैले अंधकार की चर्चा करते हैं। एक आध्यात्मिक ज्ञान का प्रकाश देता है तो दूसरा अंधेरा दूर करने का टार्च बेचता हैं।

> "भव्य पुरूष प्रवंचन के अंत पर पहूँचते हूए कहने लगे -- भाइयों और बहनों ,डरों मत। जहाँ अंधकार है, वही प्रकाश हैं। अन्धकार में प्रकाश की किरण हैं, जैसे प्रकाश में अन्धकार की किंचीत् कालिमा हैं। प्रकाश भी हैं। प्रकाश बाहर नही हैं, उसे अन्तर में खो जों। अन्तर में बुझी उस ज्योति को जगाओं। मैं तुम सब को उस ज्योति को जगाने के लिए आवाहन करता हूँ। मैं तुम्हारे भीतर उसी शाश्वत ज्योति को जगाना चाहता हूँ। हमारे "साधना मन्दिर" में आकर उस ज्योति को अपने भीतर जगाओं।" [१]

इसी प्रकार टार्च बेचनेवाला कहता हैं "आजकाल सब जगह अंधेरा छाया रहता हैं। राते बेहद काली होती हैं। साँप जमीन पर रेंग रहे हैं।" एक अन्धेरा दूर करने का टार्च बेचता हैं तो दूसरा आध्यात्मिक ज्ञान का प्रकाश देता हैं। इस प्रकार परसाई जी ने तीखे व्यंग्य लेख के सहारे ढोंगी साधु संतों का भण्डा फोड दिया हैं। साधु संत भोली भाली जनता को आत्मा की ज्योति जगाने के लिए साधना मंदिर में बुलाते हैं लेकिन वहाँ क्या होता हैं, आपको मालुम है ? औरत की इज्जत लूटी जाती हैं, दीन-दलित महिलाओं को देवदासी बनाकर उनका भोग किया जाता हैं। अंधश्रध्दालु भोली जनता का शोषण किया जाता हैं। बडे से बडे पापकर्म मंदिर में हो रहे हैं। साधु, संत, पंडे-पूजारी

---

१ "सदाचार का ताबीज", (टॉर्च बेचनेवाला), पृ.४७।

चारित्र्यहीन बने हुये हैं। मंदिर में होनेवाले अनाचार पर प्रकाश डालते हुए परसाई लिखते हैं ; --

"बाहर स्त्री संसर्ग व्यभिचार हैं मगर मंदिर में सदाचार हैं। बाहर जिसे ग्रहण करना, अनैतिक माना जाता हैं उसे मंदिर में देवदासी बनाकर रख लेना पूरी तरह नैतिक हैं। बाहर नशा करना बुराई पर मंदिर में जब साधु चरस पीते हैं, तब वह पवित्र कर्म होता हैं। दुनियाँ के हर धर्म के धर्मस्थल में बुरा काम अच्छा बनाकर किया जाता हैं। जीव हत्या तो वैसे पाप माना जाता हैं, मगर देवता के लिए मंदिर में बकरे का बलिदान पवित्र अनुष्ठान होता हैं।" [१]

इरान में अगर एकाध स्त्री वेश्या बनती हैं तो उसे ये धार्मिक पाखण्डी मुल्ला, अयातुल्ला गोली मारने का आदेश देते हैं। स्त्री अगर व्यभिचारी बने तो उसने धर्म के खिलाफ आचारण किया समझकर उसे सजा दी जाती हैं तो ये धर्म के ठेकेदार मुल्ला, अयातुल्ला तीन-तीन औरतों से शादी क्यों करते हैं ? एक साथ अनेक स्त्रीयों से अनैतिक संबंध रखते हैं। ऐसे मुल्ला अयातुल्लाओं के गिरे हुअे चरित्र पर घनाघाती प्रहार करते हुए परसाई लिखते हैं ; --

"जनाब -- एक बीबी तो काफी हुई आपके साथ सोने, रोटी बनाने और बच्चा पैदा करने के लिए, फिर ये बाद की दो बीबियां किसलिए ? ये तो रंडियां ही हुई न, जिन्हे आपने रोटी-कपडे पर रख छोडा हैं, आपके जिस्म की ख्वाहिश पूरी करने के लिए, या आप खुद "मर्द" वेश्या हैं जो तीन औरतों की जरूरत पूरी कर रहे हैं। अब शरीअत के मुताबिक या तो आप गोली खाईये या इन औरतों को गोली मारिये।" [२]

सचमुच इन मजहबी हैवानों को गोली से उडाना चाहिए ? जो इस समाज को बर्बर बना रहे हैं। मगर मारेगा कौन ? इन अयातुल्लाओं का दिमाग यह समझने में काबिल नही हैं कि आर्थिक सुधार अगर नही हुआ तो घर-

---

१ "सुनों भाई साधो", (सदाचार का जुआ), पृ.११८।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (इस्लाम के कोडे), पृ.५२।

घर में रंडियाँ पैदा हो जाएंगी।

बहुत प्राचिन काल से सामान्य जन जीवन पर धर्म का प्रभाव हैं। सदियों से अज्ञान और अंधविश्वास फैलाने का काम राजसत्ता, अर्थसत्ता और धर्मसत्ता ने मिलकर किया हैं। धर्मसत्ता ने सामान्य पीडित जन के मन में ऐसी झूठी श्रध्दाएं, निष्ठाएं और विश्वास जमा दिये हैं कि गुलाम आजाद होने को तैयार नही हैं। राजसत्ता, अर्थसत्ता और धर्मसत्ता ने मिलकर बहुजन समाज को यथास्थिति में रखना चाहा और शोषण की परंपरा को बनाये रखा अपितु यह काम वे भगवान या खुदा के मारफत करते रहे हैं। ईरान में आज भी करों की घोषणा मस्जिद के बुर्ज पर चढ कर की जाती हैं अगर इसके खिलाफ कोई आवाज उठाता हैं तो उसे खुदा से लडाई समझकर लडनेवाले आदमी को मौत की सजा दी जाती हैं। ये मजहबी हैवान अज्ञान और अंधविश्वास को ही सच्चा धर्म बता देते हैं। लोकतांत्रिक और जनवादी ताकतों को खत्म करने पर ये तुले हुअे हैं। इन फौजी तानाशाह की अदालते मस्जिद में होती हैं, जिनका मजिस्ट्रेट मुल्ला होता हैं। ये फौजी तानाशाह मजहब को साथ लेकर जनता पर हुकमत कायम कर देते हैं, जिनके बल ये जनता के अधिकार छिनने हैं। ऐसे धर्म पर प्रहार करते हुए परसाई जी लिखते हैं ; —

> "मजहब इंसान को सुसंस्कृत न बनाकर बर्बर बना दे, तो मजहब को क्यो गले में लटकाये रखा जाता हैं।" [१]

जो धर्म मनुष्य को मानव बनने नही देता बल्कि उसे पशु जैसा बर्ताव करने में सहायक होता हैं उसे धर्म नही अधर्म कहा जाता हैं। और ऐसे अधर्म को ही धर्म बताने में ये धार्मिक पाखण्डी आगे रहते हैं। ये धार्मिक पाखण्डी अपने फायदे के लिए अष्टग्रहों का भय जनता को दिखाते हैं और उनसे यज्ञ करवाते हैं। ऐसे धार्मिक पाखण्डीयों की पोल परसाई जी ने खोल दी हैं। यहाँ हजारो, लाखो रुपये यज्ञ के चन्दे के लिए इकठ्ठे हो जाते हैं किन्तु अगर कोई अस्पताल या स्कूल के लिए चन्दा इकठ्ठा करे तो उसे कोई फूटी कौडी भी नही देगा।

---

१ "पाखण्ड का अध्यात्म", (इस्लाम के कोडे), पृ॰५०।

इसतरह के धार्मिक यज्ञ करके भारत की भोली-भाली जनता को बहुत प्राचिन काल से जिन पंडितों, जोतिषियों ने लुटा हैं उन्हे अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाते हुए परसाई लिखते हैं ; --

"हमारे यहां का पंडित -- पुरोहित वर्ग इतना प्रबल हैं कि वह आठ ग्रहों को टाल देगा। ब्रम्हांड के जितने भी ग्रह और नक्षत्र हैं, उन सब का एग्रीमेंट अपने पंडितों के साथ हैं। भारत का ब्राम्हण ग्रहों को मना लेता हैं। लडकी, लडकों की कुंडली में जब ग्रह नही मिलते और विवाह नही जमता, तब पुरोहित ही आकर समस्या हल करता हैं। एक ब्राम्हण की पूजा से ग्रह शांत हो जाता हैं। जब इस देश के हजारों ब्राम्हण ग्रहों की पूजा करेंगे, तब आठ क्या आठ सौ ग्रह भी शांत हो जायेंगे।" [१]

यज्ञ करनेवाले ये धार्मिक पाखण्डी जानते हैं कि यज्ञ करने से किसी भगवान की प्राप्ति नही होती। वह तो एक देशव्यापी षडयंत्र हैं, जो धार्मिक पाखण्डीयों द्वारा किया जाता हैं। यज्ञ इसलिये किया जाता हैं कि समाज उन्ही पुरानी परम्पराओं में जकडा रहे, ऊँच-नीच, जाति भेद-भाव को माने, जनता को पिछडा हुआ रखना और उसे अंधविश्वासी, भाग्यवादी और संघर्षहीन बनाना, लोग परिवर्तनकामी न हो, वे सडी-गली व्यवस्था से विद्रोह न करे। इस महायज्ञ में धार्मिक पाखण्डी, राजनीतिक और बुध्दिजीवी सभी शामिल रहते हैं। इसतरह यज्ञ करनेवाले धर्म के ठेकेदार और उच्चवर्णीयों पर परसाई की टिप्पणी हैं ; --

"यज्ञ में वास्तव में अन्न, घी, शक्कर नही जलते, विवेक स्वाहा! बुध्दि स्वाहा! तर्क स्वाहा! विज्ञान स्वाहा!" [२]

प्राचीन काल से वह मान्यता हैं कि गंगा में नहाने से सभी पापकर्म धो जाते हैं, तमाम पापीयों को मोक्ष की प्राप्ति होती हैं। पाप करके गंगा स्नान करनेवालों को अपने व्यंग्य का निशाना बनाते हुए कबीर कहते हैं - "इसमें कुलबोरन या बदचलन सबसे आगे रहती हैं।" इसीतरह प्राचीन काल से सडी परम्पराएं,

---

१ "सुनों भाई साधों", (अष्टग्रही योग आ गया), पृ.३५।

२ "पाखण्ड का अध्यात्म", (हरिजनों को पिटने का यज्ञ), पृ.११८।

कुसंस्कार, अंधविश्वास से फली इस भूमि में ज्ञान की निर्झरिणी खो गई हैं।

"कुसंस्कारों की जडे बडी गहरी होती हैं। रविन्द्रनाथ ने ठीक ही कहा हैं कि ज्ञान की निर्झरिणी अन्धविश्वासों की मरुभूमि में खो गई हैं।" [१]

बहुत प्राचिन काल से हमारे मन पर धार्मिक अन्धविश्वासों और परम्पराओं का गहरा प्रभाव हैं, जिससे उपर हम उठ नही सकते। ज्ञानी, बुध्दिजीवी आज बंद कमरों में चुपचाप बैठे हैं। जहाँ की जन-चेतना झूठ से लागाव लगाये बैठी हो वहाँ सत्य का साक्षात्कार करना कठिन कार्य हैं। लेकिन परसाई जी का यह प्रयास हैं कि लोगों को अपने गलती का अहसास हो, प्रतिक्रियाहीन समाज में प्रतिक्रिया की चेतना जगे, युवावर्ग को क्रांतिकारी विचारों से प्रेरित करना परसाई के व्यंग्य लेखन का उद्देश्य रहा हैं, तभी तो युवा वर्ग सोच-विचार करते हुए नजर आ रहा हैं ; —

"पहले जन्मे लोग अपनी सही-गलत मान्यता के लिए पीछे-जन्मों को क्यो काटे ? एक पीढ़ी के विश्वासों के लिए दूसरी पीढ़ी क्यो चीरी जाये।" [२]

"सदियों की भावाध, विनम्र आज्ञाकारी समाज में चिंतन की यह क्षमता, तर्क की यह शक्ति परसाई के व्यंग्य निबंधों की उपलब्धि हैं। किन्तु सदियों से जड जमाये संस्कार आसानी से समाप्त नही होते।" [३]

"पाठकजी का केस" इस व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने भक्ति का ढोंग रचानेवालों की पोल खोली हैं। भक्ति का ढोंग आज वही लोग कर रहे हैं जिन्हे प्रशासन क्षेत्र में भ्रष्टाचार के केस में सस्पेण्ड किया हैं, कुछ लोगों को तरक्की चाहिए ऐसे ही लोग आज भक्ति का दिखावा कर रहे हैं। "भगत की गत" इस व्यंग्य लेख में लाउडस्पीकर पर भजन किर्तन कर भक्ति का ढोंग करनेवालों पर प्रहार करते हुए लिखते हैं ; —

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (स्नान), पृ.७५।

२ " — वही — (कन्धे श्रवणकुमार के), पृ.११२।

३ "स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी व्यंग्य निबंध", डॉ.शशि मिश्र, १९९१, पृ.११३।

"भगवान ने कहा -- वे तो अपनी चीज का विज्ञापन करते हैं। तुम क्या मेरा विज्ञापन करते थे? मैं क्या कोई बिकाऊ माल हूँ।" [१]

धर्म के ठेकेदार पण्डे-पूजारी मंदिरों में लाऊडस्पीकर पर भजन किर्तन कराते हैं, ये सब करने से वे मानते हैं कि भगवान प्रसन्न होगा और पूजारी को मुक्ति मिल जायेगी अपितु इनके लाऊडस्पीकर के भजन-किर्तन से मंदिर के आस-पास के लोगों को अखण्ड कोलाहल सहना पडता हैं। परिक्षा के दिन छात्र ठिक से अध्ययन नहीं कर सकते, बिमार और बुढे लोगों को पूरी तरह नींद और आराम नहीं मिलता। ऐसे पाखण्डीयों का विरोध करे तो वे दंगा कराने पर उतारू होते होते हैं। ऐसे साधुसंतों के भजन से केवल धार्मिक पाखण्ड ही नजर आता हैं। असल में ये पूजारी अपने भौतिक सुख के लिए यह सब दिखावा करते हैं। इन धार्मिक पाखण्डीयों पर परसाई ने व्यंग्य किया हैं। देश की-भोली-भाली जनता के अज्ञानता का किस तरह लाभ उठाया जाता है इसका और एक उत्तम उदाहरण "बेईमानी की परत" इस व्यंग्य निबंध में मिलता हैं। देश की धर्मप्राण जनता को ठगाने के लिए रेल्वे प्लेटफार्म पर वजन तौलने और ज्योतिष बताने के लिए अब मशिने रखी हैं और शोषण की परम्परा को आगे बढाया।

"इस देश की मशीने भी चापलूसी करना सीख गई हैं। सिर्फ १० पैसे में कुछ ऐसी बाते कहती हैं ..... आपके विचार बहुत ऊँचे हैं। आप उनके अनुसार कार्य करेंगे, तो सफल होंगे ......।" [२]

मुझे तो लगता हैं कि यह एक देशव्यापी षड्यंत्र हैं जिसका उद्‌देश्य समाज को यथास्थिति में रखना हैं और इसमें बुध्दिजीवी, राजनीतिज्ञ और धर्म के ठेकेदार सभी संम्मिलीत हैं, जो भोली-भाली धर्मप्राण जनता के अज्ञानता का फायदा उठा रहे हैं।

मानवीय उत्थान का एक मात्र आधार शिक्षा हैं। शिक्षा के सहारे कोई भी विकसनशील राष्ट्र अपनी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक एवं

---

१ "सदाचार का तावीज", (भूत की गुत), पृ.४१।

२ "काग भगोडा", (बेईमानी की परत), पृ.४८।

सांस्कृतिक उन्नति कर सकता है। शिक्षा के बिना देश में अज्ञान फैलकर विकास की धारा रुक जायेगी। शिक्षा प्रसार के मूल में बडे बडे आदर्श और सिध्दान्त बनाये गये थे लेकिन यहाँ भी वही दुर्घटना हुई जो अन्य क्षेत्रों में हुई थी। राजनीति की विषाक्त वायु शिक्षा क्षेत्र को घातक बन गयी। शिक्षा संस्थान सार्वजनीक न होकर वैयक्तिक मालमत्ता बन गये। शिक्षा क्षेत्र पर राजनीतिज्ञों का आक्रमण हुआ, परिणामत: आज शिक्षा प्रसार के नाम पर सरकारी कोश से करोडो रुपया इन्ही स्वार्थी, व्यावसायिक और सत्तालोलुप नेताओं के जेब में जाने लगा। शिक्षा क्षेत्र के साथ जिस तरह का बुरा व्यवहार किया जा रहा है उतना किसी अन्य क्षेत्र के साथ नही। आज शिक्षा क्षेत्र ज्ञान दान का क्षेत्र न बनकर उसमें अंधेरा और कोरी व्यावसायिकता ने घेर लिया है। बेचारा प्राध्यापक इन संस्थापालकों का खिलौना बन गया है। जिसके फल स्वरुप व्यंग्य रचनाओं का सृजन होने लगा। शिक्षा संस्थान व्यक्तिगत मालमत्ता होने के कारण शिक्षा क्षेत्र में फैली गंदगी को प्रस्तुत करते हुए परसाई जी "प्राइवेट कालेज का घोषणा-तंत्र" में लिखते हैं -- "संस्था मालिक संस्था का काम व्यवस्थित ढंग से चलाने, इसे आदर्श संस्था बनाने के उद्देश्य से इसके संचालन के लिए कुछ सिध्दान्त और नियम बना लिये हैं, जिसका पालन होना आवश्यक है। नीचे हम इन्हे दे रहे हैं ; --

"१) कालेज की इमारत बनाने का ठेका हमारे फूफाजी को ही दिया जायेगा। पिताजी की स्मृति के प्रति ईमानदार होने के लिए यह जरुरी है। उन्होने शिव-मंदिर चन्दे से बनवाया था, जिसका ठेका फूफाजी को ही दिया गया था।

२) जब यह इमारत बन रही हो, तब यदि हमारा भी कोई मकान निर्माण के पथ पर हो, तो उसके सामान का उपयोग इसमें से हो सकता है, क्यों कि फर्म एक ही है।

३) जब तक हमारे मामाजी की स्टेशनरी की दुकान है, तब तक कॉलेज के लिए सारी स्टेशनरी उसकी दूकान से खरीदनी पडेंगी।

४) कॉलेज की व्यवस्था-समिति के अध्यक्ष हम होंगे। हमारे बाद हमारा लडका होगा। यही परम्परा आगे भी चलेगी। हमारे पिता और माता के पक्ष के रिश्तेदार सदस्य होंगे।

५) अन्य सदस्य ऐसे होंगे ; जिनका विद्या से बहुत दूर का रिश्ता हो। विद्वान लोग बाल की खाल निकालकर गडबड पैदा करते हैं, क्योंकि यह एक व्यावसायिक प्रतिष्ठान हैं, इसलिये इसे चलाने में व्यापारी वर्ग का अधिक हाथ रहेगा।

६) प्रिंसिपल को प्रतिदिन हमें दुकान पर "जैरामजी की" करने आना पडेगा। जिस दिन वह न आयेगा, उस दिन का वेतन काट लिया जायेगा। अगर वह लगातार पन्द्रह दिनों तक नही आया तो निकाल दिया जायेगा।

७) हर प्रोफेसर को हफ्ते में कम-से-कम एक बार हमें "जैरामजी की" करने आना पडेगा। जो रोज आयेगा, उसके प्रिंसिपल बनने के चांस रहेंगे।

८) हमारे खानदान के हर लडके-लडकी की शिक्षा का सारा भार कालेज के स्टाफ पर रहेगा। उन्हे घर आकर मुफ्त में पढ़ाना होगा और परीक्षा के पहले पेपर बताने से लेकर बाद में नम्बर बढ़ाने तक का काम उन्हे करना होगा।

९) प्रोफेसर का मुख्य कार्य पढ़ाना नही बल्कि हमारे पास आकर हमारी चापलूसी तथा दूसरे साथियों की चुगली करना होगा। चुगली सुनने के लिए हम आधी रात को भी तैयार रहेंगे।" [१]

शिक्षा संस्थान व्यक्तिगत मालमत्ता होने के कारण बेचारा प्राध्यापक एक खिलौना मात्र बन गया हैं, जिसे जब चाहा ठोकर मार दी जाती हैं। अध्यापक के एक जगह के लिए सौ से अधिक आवेदन-पत्र आते हैं, जिसमें से जो अपने प्रार्थना पत्र पर पेपर वेट जितना अधिक वजनी रखता हैं उतना ही उसके हवा में

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (प्राइवेट कालेज का घोषणा-पत्र), पृ.१९,२०।

उड जाने का खतरा कम होता हैं। और जो अधापक बनना चाहते हैं पर प्रार्थना-पत्र पर पेपर-वेट नही रखते उसकी एप्लीकेशन हवा में उड जाती हैं। इस स्थिति के लिए विश्वविद्यालय और सरकार जिम्मेदार हैं, जिसनें अधापक, प्राध्यापक बनाने के कारखाने खोल रखे हैं। पक्का माल याने प्राध्यापक, अध्यापक तो निर्मान किये लेकिन उसकी खम अधिक न होने के कारण यह स्थिति निर्मान हैं। इसके बारे में शिकायत करे तो जबाब मिलता हैं — हमने उच्च शिक्षा का द्वार सभी के लिए खुला किया हैं। बस! हमारी जुबान बंद। साधों, बी॰एड्॰ प्रवेश के लिए २५ या ३० हजार रुपयों की पूंजी संस्था मालिक को देनी पड़ती हैं और बी॰एड्॰ के बाद अधापक की नोकरी पानी हैं तो ४० या ५० हजार की पूंजी संस्था मालिकि को देनी पड़ती हैं। और महाविद्यालय में प्रोफेसर बनना चाहते हो तो उसके दर - दाम कुछ और ही हैं, यह आज के युग की शैक्षणिकि स्थिति हैं।

समाज में पलनेवाली हर एक विसंगति को परसाई जी ने देखा, परखा, अनुभव लिया और अभिव्यक्त किया हैं। "शिक्षकों" का कल्यान" इस व्यंग्य लेख में शिक्षकों के असहाय स्थिति का वर्णन किया हैं। सार्वजनीक शिक्षा संस्थान न होने के कारण प्राइवेट शिक्षा संस्थाओं में शिक्षक से वेतन-रजिस्टर पर १५० रुपये पर हस्ताक्षर करवाते हैं और हाथ में ७५ रुपये दिया जाता हैं, तथा संस्थाओं में "शिक्षक कल्यान निधि" खोलते हैं लेकिन यह एक दिखावा होता हैं। शिक्षक असहाय कल्यान निधि केवल नाम रहता हैं और उससे एकत्र की हुई धन राशि सम्पन्न लोगों के ही काम आती हैं। आज-कल शिक्षा संस्थाओं में हेड मास्टर, प्राचार्य और मैनेजमेंट मिलकर बच्चों से पैसा इकठ्ठे करते हैं जिसकी रसीद छात्रों को नही दी जाती। इस तरह पैसा इकठ्ठा करके अपने स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करनेवाले शिक्षा संस्थाओं की परसाई जी ने खाल उधेड दी हैं। "बलिहारी गुरू आपकी" इस व्यंग्य लेख में परसाई जी लिखते हैं ; --

> "हेडमास्टर साहब का कथन हैं कि पहले लडके जो पैसा स्कूल में देते थे उसकी रसीद नही माँगते थे, पर अब वे रसीद माँगने लगे हैं। इसका अर्थ हैं कि लडकों में अनुशासन और नैतिकता की कमी हो गई हैं।" [१]

---

१ "सुनों भाई साधो", (बलिहारी गुरू आपकी), पृ॰६२।

विश्वविद्यालय की छाव में हर एक छात्र अपना भविष्य सजाता, संवारता है लेकिन क्या ऐसा हो रहा है? शिक्षा में बहुत प्राचीन काल से अनैतिक आचरण किये जा रहे हैं। महाभारत काल में गुरू द्रोण ने एकलव्य का अंगूठा कटवाकर अर्जुन को श्रेष्ठ साबीत कर दिया था। वैसे ही आज के अध्यापक द्रोणाचार्य के मार्ग पर चल रहे हैं। वे अपने स्वार्थों के लिए गरीब एकलव्यों के अंगूठे कटवा रहे हैं और रईसों, नेताओं के पुत्र अर्जुनदास को वे इस युग में श्रेष्ठ साबीत करना चाहते हैं, यह बात आज के अध्यापक गुरू द्रोण के मुह से परसाई जी ने साबीत की है।

"उसका अंगूठा मैं नही ले सका। पर मेरे पास एक अकारय दाँव भी है, जिससे वह बच नही सकता। तुम्हारा एक पेपर जाँचने के लिए मुझे मिलनेवाला है और दूसरा मेरे परममित्र देवदत्त शर्मा को। इन दोनों में तुम्हें १०० में से ९९ नम्बर मिल जायेंगे और तुम एकलव्य से आगे निकल जाओगे। उसके दोनों अंगूठे कट जायेंगे .... उसकी तीव्र बुध्दि और उसका अध्यापन धरे रह जायेंगे।" [१]

इसीतरह का क्रांतिकारी परिवर्तन शिक्षा क्षेत्र में लाने को आज के अध्यापक उतावले हैं जिसे परसाई जी ने आपेने व्यंग्य का निशाना बनाया हैं। लेकिन इसका मतलब यह नही है कि हम सारा दोष शिक्षक को ही दे। अध्यापकों के साथ साथ सारा समाज और व्यवस्था भी दोषी है। पैसा तो धनिक के पास है, पैसों के बल पर धनिक लोग अपने बेटों को अर्जुन बनाना चाहते हैं, और अध्यापकों से गरीब एकलव्यों के अंगूठे कटवा रहे हैं। दोष सिर्फ धनिक पिता का भी नही छात्रों का भी है जो परिक्षा उत्तीर्ण होने के लिए आचार्यों की सेवा करते हैं, अध्यापकों के बेटों को मिठाई, कपडे खरीद देते हैं, उनके घर का सारा काम करते हैं और फिर पास होने के लिए दया की भीख मांगता रहता है;

"तो गुरूदेव, मुझे वर दीजिए कि मैं ही फर्स्ट क्लास फर्स्ट आऊँ और छात्रवृत्ति लेकर विदेश जाऊँ।" [२]

---

१ "सदाचार का ताबीज", (एकलव्य ने गुरू को अंगूठा दिखाया), पृ०२५।

२ " — वही — , पृ०२३।

शिक्षा के क्षेत्र में छात्र नम्बर बढ़वाकर, पर्चा आउट करके, अपने प्रश्नपत्र के लिए किसी दूसरे छात्र को बिठाना, जिसे "डमी प्रकरण" कहा जाता है, इसी तरह के अनैतिक आचरण द्वारा वह परिक्षा उत्तीर्ण हो रहा है कोई अध्ययन करके पास हो भी जाये तो उस बेवकूफ समझा जा रहा है, सभी पगडंडि पकड़कर सफल बनना चाहते हैं। देखिए नंबर बढ़वानेवाले लोग किस तरह की बाते करते है, जिसे परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है।

> "अपने दोस्त, रमेश चन्द्र के भाई सुरेश की मोटर साईकिल जिस पर, अंग्रेजी में नम्बर २४३१ लिखा है, बिगड गयी है। वह आपके मित्र सिन्हा के पास सुधरने गयी है। आप उसे सुधरवा दे कि कम-से-कम ४० प्रतिशत तो काम दे।" [१]

इसका मतलब यह है कि सुरेश का अंग्रेजी का पेपर जिस पर सीट नम्बर २४३१ लिखा गया है, वह प्रोफेसर सिन्हा के पास जाँचने गया है। कृपा करके सुरेश को ४० प्रतिशत मार्क्स दिलवा दिजीए। पर अपने युग में चलनेवाली विसंगति को एकलव्य ने जान लिया है कि कोई गुरू द्रोण अपने शिष्य अर्जुन को श्रेष्ठ साबीत करने के लिए एकलव्य का अंगूठा कटवा सकता है। वह इस षड्यंत्र को पहले से ही जानता है और अपने अध्यापक के बारे में कुलगुरू से शिकायत करता है जिससे यह साबीत होता है कि आज का छात्र एकलव्य अपने गुरू द्रोण को अंगूठा काटकर नहीं बल्कि अंगूठा दिखाता है, जिसके बारे में अध्यापक स्वयं कहते हैं ; —

> "आचार्य बोले ..... पर एकलव्य ने मेरी रिपोर्ट कर दी थी।" [२]

शिक्षा के क्षेत्र को नेताओं ने तो गंदा किया ही है पर अब कुछ अध्यापक भी उसे गंदा बना रहे हैं लेकिन एकलव्य नेताओं और अध्यापकों को काली करतुतों को जान गये हैं इसलिये वे कुलगुरू से शिकायत करता है, अगर वहां भी

---

१ "पगडंडियों का जमाना", पृ•७९।

२ "सदाचार का ताबीज", (एकलव्य ने गुरू को अंगुठा दिखाया), पृ•२६।

अगर न्याय नहीं मिले तो विद्यार्थीयों को लेकर विश्वविद्यालय पर धावा बोल देते हैं। परसाई जी ने युग की बात युग के लिए कही हैं तब हम देखते हैं कि आज भी एकलव्य से अंगूठा गुरुदक्षिणा में माँगा जाता हैं।

"एक दिक्षांत भाषण" इस व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने विश्वविद्यालय छात्रों पर करारा तमाचा मारा हैं। नेता और अध्यापकों ने शिक्षा क्षेत्र को गंदा बना दिया हैं पर छात्र क्या उसे कम कलुषित बना रहे हैं। छात्रों के दंगा-फसाद चुनाव की आतषबाजी, परिक्षा के वक्त पर्यवेक्षक को धमकी देना, लडकियों को छेडना, अनैतिक आचरण करना आदि अन्य कारणों के कारण आज शिक्षा के क्षेत्र में पुलिस के बिना काम ही नही चल रहा हैं, यह हमारे लिए लज्जा की बात हैं, जिस पर आहत करनेवाला व्यंग्य परसाई जी ने लिखा हैं। विश्वविद्यालय के दिक्षांत समारोह में मंत्री-महोदय का भाषण होता हैं, जिसपर परसाई जी ने व्यंग्य लिखा हैं, वह आज के परिवेष से मेल खाता हैं।

> "इस समारोह में छात्रों से ज्यादा पुलिस के सिपाही देखकर मेरा मन आनन्दित हो उठा। देखिए सिर्फ २० वर्षों में हमने कितनी प्रगति कर ली। दुनिया में बहुत पुराने विश्वविद्यालय होंगे, पर वहाँ भी एक छात्र के पीछे एक पुलिस मैंने नही हो पाया। मैं तो उस दिन की कल्पना कर रहा हूँ, जब आप लोगों में से हरेक के बाथरूम में एक सिपाही होगा। अगर शासन और छात्रगण परस्पर सहयोग करते रहे और दोनों ने प्रयत्न किए, तो वह दिन दूर नही हैं जबकि उपकुलपति के आसन पर पुलिस थानेदार विराजमान होगा। आप इस दिशा में प्रगति कर रहे हैं। उसकी मैं प्रशंसा करता हूँ।" [१]

विश्वविद्यालय के परिसरों में विद्यार्थीयों के बजाय वर्दीधारी पुलिस होते हैं, इसका कारण यह हैं कि विद्यार्थीयों ने पूरी पढ़ाई की हैं, अब उन्हे रामपूरी की जरूरत ज्यादा महसूस होने लगी हैं। प्राध्यापक द्रोणाचार्य के मार्ग पर चल रहे हैं क्योंकि वे भी अपने स्वार्थो के लिए गरीब एकलव्यों के अंगूठे कटवा

---

१ "काग भगोडा", (एक दिक्षांत भाषण), पृ॰४३।

रहे हैं। आखिर एकलव्य के पास गुरुदक्षिणा में देने को हैं ही क्या ? सिर्फ गुरुभक्ति, बस! भक्ति को लेकर क्या करे, उससे तो पेट नही भरता। इसलिए अध्यापक अर्जुन के लिए सदैव एकलव्य का अंगुठा दान में मांगता रहेगा क्योंकि आज के युग में पैसा ही सब कुछ हैं, पैसा बोलता है, पैसा नचाता हैं, दिन-हीन के साथ तो वह हमेशा खिलवाड करता आया हैं इसलिए एकलव्य के अंगुठे सदैव काटे जायेंगे।

परसाई स्वयं एक साहित्यकार हैं जिन्होने सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक और शैक्षणिक क्षेत्र में पलनेवाले विरोध, अंतर्विरोध तथा विसंगतियों को अभिव्यक्ति दी है, साथ ही साहित्य के क्षेत्र में पायी जानेवारी विसंगतीयों की ओर संकेत करना उन्होने अपना कर्तव्य समझा हैं। इस कर्तव्य को निभाते समय साहित्य में प्रचलित कोई विशेष प्रवृत्ति, साहित्यिक चोरी, साहित्यिकों की ईर्ष्या-भावना, काव्य वाचन की अतिशयता आदि साहित्यिक व्यंग्य के विषय हैं।

साहित्य समाज का दर्पन होता हैं, उसमें व्यक्ति और उसके समाज की इच्छाइयाँ, बुराइयाँ, विरोध और अन्तर्विरोध, वैशिष्ट्य और समानताएं आदि का प्रतिबिंब साहित्य में दिखाई देता हैं। साहित्य में वह शक्ति होती हैं, जिसमें बडे-से-बडे पहाड को भी उखाड फेंक दिया जाता हैं। स्वातंत्र्यप्राप्ति के लिए जिस साहित्य ने जन मानस में क्रांति की आग सुलगा दी थी उसी क्षेत्र में अब कुछ दुषित प्रवृत्ति ने जन्म लिया हैं। राजनीति की विषाक्त वायु ने साहित्य को भी नही छोडा। देखिए आज का नेता साहित्यकारों को किस तरह की सीख देता है ;

> "आज-कल बलिदान, त्याग और देश-प्रेम का फैशन हैं। इन्ही पर लिखना चाहिए। गरीबों की दुर्दशा पर भी लिखने की फैशन चल पडी हैं। तू चाहे तो हर विषय पर लिख सकता हैं। तू कल शाम तक बलिदान और देश प्रेम के भावोंवाली चार पंक्तियाँ मुझे जोडकर दे दे। मैं उन्हे राष्ट्र के काम में लानेवाला हूँ।" [१]

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (इति श्री रिसर्चाय), पृ.१७।

त्याग, बलिदान, देश-प्रेम जिस पर अपने देश की नींव खडी हैं उसे आज का नेता फैशन समझता हैं, देश के दीन-हीन गरीब लोगों की दुर्दशा, उसे फैशन लग रही हैं। और साहित्यकारों को इन्ही विषयों पर लिखने की सीख देता हैं। इसी विसंगति को परसाई जी ने देखा, परखा, अनुभव किया और अपने व्यंग्य का निशाना बनाकर संवेदनशील पाठक वर्ग के सामने रखा हैं। जैसा नेता वैसे ही आज के साहित्यकार, समीक्षक। उन्हे भी अब चापलुसी, स्तुति भाने लगी हैं। किसी साहित्यिक कृति के लेखक अगर समीक्षकों के परिचित उनका काम-काज करनेवाले, उनकी स्तुति करनेवाले, हर समय उनकी चापलुसी करनेवाले हो तो ही उनके कृति की अच्छी समीक्षा आज के समीक्षक कर देते हैं, अनत: अच्छी कृति होकर भी उसकी कटु से आलोचना की जाती हैं, जिसके उपर व्यंग्य करते हुए परसाई जी लिखते हैं;

> "समीक्षकों के घरों में पुत्र-जन्म होते रहते हैं, पर मैं बधाई के कार्ड नही लिख पाता। नतीजा यह कि वजन बढ़ता भी हैं, तो किसी मशीन की टिकीट पर रिकार्ड नही होता।" [१]

किसी लेखक की कृति अच्छी हो तो उसका बोल-बाला होता ही रहता हैं, साथ ही उस कृति के लेखक का समाज में वजन भी बढ़ता हैं, उसे प्रतिष्ठा मिलती हैं लेकिन सम्मान और प्रतिष्ठा से पेठ नही भरता, पेट भरने के लिए रोटी चाहिए और रोटी के लिए पैसों की जरूरत होती हैं। और पैसों के लालच में आज बडे-से-बडा अग्निधर्मी साहित्यकार भी कौडियों के मोल बिक रहा हैं। बिका हुआ व्यक्तित्व अपनी भावनाओं, संवेदना के प्रति ईमानदार हो ही नही सकता। आर्थिक सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र की भाँति साहित्यिक क्षेत्र में भी मोहभंग की स्थिति इस देश में बढ रही हैं। जन-सामान्य की भावनाओं को स्वर देनेवाले बिरले ही होते हैं। जीवन की दरिद्रता और अभावों से तंग आकर आज अनेक साहित्यकार बेबस हैं, जिन्हे आर्थिक सहायता देकर जन-भावनाओं के स्वर को अभिव्यक्ति देने का काम करवाना चाहिए लेकिन अपने देश में अच्छी

---

१ "काग भगोडा", (बेईमानी की परत), पृ॰४९।

रचना को पुरस्कृत तथा आर्थिक सहायता देने की परम्परा नही हैं, इसी स्थिति की ओर संकेत करते हुए परसाई लिखते हैं ; --

"पुरुस्कार और आर्थिक सहायता रचना करने के लिए मिलते हैं या रचाना बन्द करने के लिए ? " [१]

फिर भी साहित्यकार अपनी भावनाओं के प्रति ईमानदार रहकर रचनाओं का सृजन करते रहते हैं, लेकिन उसकी कृति प्रकाशित होने तथा उसे पाठ्यक्रम में लगाने दिक्कते आती हैं, वहाँ उसे किसी इष्टदेव को ढूँढना पडता हैं। साहित्य के क्षेत्र में भी राजनीति की तरह गुटबाजी बैठ चुकी हैं। लेखकों को अपनी साहित्यिक कृति प्रकाशित करने या कृति को पाठ्यक्रम के रूप में स्विकृत करने के लिए अपने इष्ट देव शिक्षा विभाग के किसी अधिकारी को प्रसन्न रखना पडता हैं। उसे प्रसन्न करने, सभी तरकीबों को अपनाया जाता हैं। तभी उसकी घटीयां सी कृति भी पाठ्यक्रम में स्थान पाती हैं। इस स्थिति को प्रकाश में लाते हूए परसाई जी लिखते हैं ;

"वत्स, तुलसीदास से स्पर्धा करना हैं, तो उन्ही का मार्ग अपनाना होगा। उन्ही की तरकीबे काम में लानी होगी। तुलशीदास में दो खास बाते थी -- एक: सामग्री का चयन और दो: ठीक इष्टदेव की भक्ति।..... तुम भी ठीक इष्टदेव को प्राप्त करो। यह एक कठीन कार्य हैं। आज-कल देवता भी बढ गये हैं और भक्त भी। फिर भी प्रयत्न से क्या नही होता ? " [२]

प्रयत्न करने से क्या नही होता, सब कुछ होता हैं, नौकरी पानी हैं तो नेता को प्रसन्न रखों, तरक्की पानी हैं तो बडे अधिकारी को खुश करों, ठीक वही स्थिति आज साहित्य के क्षेत्र में पनप रही हैं, जिसे परसाई ने रोक लगाने का प्रयास किया हैं। यह ठीक ठिक हैं कि अपनी साहित्यिक कृति प्रकाशित

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम, वे और भीड़), पृ.१४।

२ "जैसे उनके दिन फिरे", (अपने अपने इष्टदेव), पृ.४३।

करवाने शिक्षा विभाग के किसी अधिकारी को प्रसन्न रखे लेकिन आज साहित्य के क्षेत्र में यह भी हो रहा है कि किसी और की रचना लोग अपने नाम से प्रकाशित करवाते हैं, ऐसे साहित्यकारों की भी यहा कमी नही है। ऐसे साहित्यकार भी है जो लेखक की कृति की नकल बनाते हैं, चोरी करते हैं। ऐसे कई गिरोह हैं जो लेखकों को भीड से अलग करके उठा ले जाते हैं, उसके हाथ-पाँव बाँधकर अंधेरी कोठरी में रखा जाता है और उससे साहित्य कृतियों का सृजन करवाते हैं और उन कृतियों को किसी और के नाम से प्रकाशित किया जाता है।

> "लेखकों की चोरी करनेवाले कई गिरोह हैं। वे भीड में शिकार को ताडते रहते हैं और किसी बहाने उसे भीड से अलग करके अपने साथ किसी अंधेरी कोठरी में ले जाते हैं। वहां उसके हाथ-पाँव बाँधकर मुँह में कपडा ठूँस देते हैं।" [१]

इसतरह स्वतंत्र भारत में आज लेखकों की स्थिति दयनिय हैं, वे विवश हैं। जीवन की दरिद्रता और अभाव के कारण अनेक साहित्यकार राजनीति की गोद में शरण ले रहे हैं। वहां वे राजनीति की समस्त गतिविधी, कूटनीति, अवसरवादीता, छल-प्रपंच को सीख रहे हैं, जिनके कारण उनके सत्य का स्वर दब गया है। ऊँचे पद, धन, सम्मान के लोभ में साहित्यकार अपने को बेच रहे हैं और बिका हुआ व्यक्तित्व अपने भावनाओं के प्रति ईमानदार नही रह सकता। यह आज की साहित्यिक स्थिति है। कुछ साहित्यकार राजनेताओं के हाथ कठपुतली बने हुये हैं क्योंकि वह लिखने के सिवा अन्य साधनों से जीविका नही कमा सकता। इस स्थिति का लाभ नेता, धनवान उठा लेते हैं और उसकी प्रतिभा का अपने हित में उपयोग करवाते हैं। नेता उससे भाषण लिखवाते हैं, धनवान उसकी साहित्य कृति अपने नाम से प्रकाशित करवाते हैं, कुछ स्वागत गीत लिखवाते हैं। लेखक की यह अभावग्रस्तता और दरिद्रता की स्थिति साहित्यिक क्षेत्र के पतन का मुख्य कारण. है।

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम, वे और भीड), पृ•१२।

"आधुनिकता का फैशन" इस व्यंग्य निबंध में देहाती लेखकों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की है और उन्हे देहाती अध्यापक के गौरव के साथ जी कर साहित्य सृजन करने की सलाह दी है।

"बहुतेरे नवतरुण ऐसे ही देहातीपन के कारण मृत्यु-कामी हो गये हैं। उनके ग्रामीन संस्कार उन्हे परेशान करते हैं। उनके बैल बिदक गये हैं। इन्हे गाँव में रहकर आंचलिक कथाएं लिखनी चाहिए और देहाती अध्यापक के गौरव के साथ जीना चाहिए।" [१]

अधिकांश देहाती लेखक बडी महत्वाकांक्षा लेकर शहर में आते हैं कि उन्हे साहित्य के क्षेत्र में सफलता मिलेगी लेकिन शहर का हाल और आधुनिक जीवन और उसकी समस्याओं का उन्हे कोई बोध नही होता, वे बिदक जाते हैं, इसलिये उनकी अधिकांश रचनाएं मृत्यु-कामी होती हैं। किसी की कोई अच्छी रचना प्रकाशित हुई तो इन देहाती आधुनिक लेखकों अपने लेखन की व्यर्थता और विफलता का अनुभव होने लगता है ऐसे देहाती आधुनिक लेखकों के प्रति परसाई जी ने सहानुभूति व्यक्त की है और देहाती गौरव के साथ आंचलिक साहित्य का सृजन करने की सलाह दी है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, साहित्यिक परिवेशगत विसंगतियों को अभिव्यक्ति देते हुए परसाई जी ने व्यक्ति और उसके दोषों के निवारण हेतु व्यक्तिगत व्यंग्य का सृजन किया है। व्यक्तिगत व्यंग्य लिखना बहुत ही साहस का कार्य है। समाज में किसी प्रचलित बुराईयों के प्रति घृणा उत्पन्न करने में सहायक बनता है। एक व्यक्ति के दोषों का निर्मूलन करने का प्रयत्न करनेवाला यह व्यंग्य दूसरे व्यक्तियों को सावधान करता है कि, वे कोई बुराई न करे।

मनुष्य स्वार्थी होता है, अपनी ही स्वार्थपूर्ती के दायरे में फँसकर उसमें संकुचित वृत्ति का प्रभाव अधिक बढता है। व्यक्तिगत द्वेश या मत्सर की भावना से वह किसी दूसरे व्यक्ति की तरक्की, सम्मान, यश बर्दाश्त नही कर सकता। व्यक्ति की इस द्वेश या मत्सर या द्वेश की भावना पर व्यंग्य का प्रहार करते हुए

---

१ "काग भगोडा", (आधुनिकता का फैशन), पृ.९४, ९५।

परसाई जी लिखते हैं ; --

"एक दफ्तर के एक कर्मचारी का तरक्की के कारण तबादला हुआ था, इसलिए उसके बिदाई का समारोह आयोजित किया जाता हैं, तब दफ्तर का एक कर्मचारी कोने में बैठकर रो रहा था। ऐसा लगता था कि, वह उस आदमी से बहुत प्यार करता था और जुदाई का गम सह नही सकता। इस संदर्भ में पूछने पर उसने बताया कि ; — "इसलिए कि वह साला तरक्की पर जा रहा हैं।" [१]

अर्थात: दुख उस कर्मचारी के जाने का नही, बल्कि वह तरक्की पर जा रहा है इस बात का हैं। व्यक्तिगत द्वेश या मत्सर की भावना को उद्धृत करना "दुःख" इस व्यंग्य लेख का उद्देश्य हैं।

"होनहार" इस व्यंग्य लेख में परसाई जी ने नारेबाजी, भाषणबाजी, आश्वासन देनेवाले इस देश के नेता पर व्यंग्य किया हैं। एक स्त्री अपने लडके का भविष्य जानने के लिए ज्योतिषी के पास गई। तो ज्योतिषी ने कहा कि - "माता तू इसके कुछ लक्षण बता दे।" तो स्त्री ने बताया कि - "वह नींद में चिल्लाता हैं - जागो! जागो! आगे बढो! आगे बढो!" तो ज्योतिषी ने उस लडके का भविष्य बताया कि —

"माँ तेरे बेटे का भविष्य बहुत उज्वल हैं। वह किसी प्रजातन्त्र का नेता हो जायेगा।" [२]

व्यक्ति के दोषों को दिखानेवाले परसाई जी ने कही कही अपने आप को भी दिल खोलकर समाज के सामने पेश किया हैं। "दो छोटी इच्छाए" इस व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने अपने आप को व्यंग्य का निशाना बनाकर देश की साधारणजनों की आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डाला हैं।

---

१ "सदाचार का ताबीज", (दुःख), पृ.१३३।

२ " — वही — (होनहार), पृ.१३०।

"बाबू दस्तखत पहचानकर कहे — "अच्छा, परसाई जी का चेक है।" फिर रजिस्टर में देखकर कहे — "मगर उनका तो कुछ ओवर-ड्राफ्ट है। ठहरिए, मैनेजर से पूछता हूँ।" वह मैनेजर से पूछे तो वह कहे- हाँ-हाँ दे दो। साउण्ड पार्टी है।" साउण्ड पार्टी कहलाना कितना बड़ा गौरव है। मैं कब साउण्ड पार्टी कहलाऊँगा ? "[१]

अपने देश में दो वर्ग होते हैं — अमीर और गरीब। एक तरफ ऐसे लोग हैं जिनका बैंकों में बहुत बडा बॅलन्स रहता हैं और वे लोग इन्कम टैक्स कैसे बचाये जाए इस चिंता में डुबे रहते हैं तो दुसरी ओर देश के साधारणजनों की यह इच्छा होती हैं कि - "मैं भी बैंक जाकर चेक काटू", इन्कम टैक्स दे दू।" याने देश की साधरणजनों की आशा-आकांक्षा को व्यक्त करना इस आत्मव्यंग का उद्देश्य हैं।

"बेईमानी की परत" इस व्यंग लेख में परसाई जी ने अपने आपको व्यंग का निशाना बनाकर नेता, साधु, आचार्य और ऑफिस के बडे साहब को अपने व्यंग का निशाना बनाया हैं। परसाई बताते हैं कि - "जब तक उनकी जिम्मेदारी पिता पर थी तब तक अनका शरीर मोठा बनता रहा लेकिन जब उन्होने अपनी जिम्मेदारी स्वयंम् पर ली तब से वे दुबले बनते जा रहे हैं।" ठिक वही बात नेता, साधु और बडे साहब में दिखाई देती हैं। नेता जनता का शोषण करके बडा बनता हैं तो साधु भक्तजनों को भक्ति का आडम्बर दिखाकर उनका शोषण करता हैं और बडा अधिकारी ज्युनियरों का शोषण करके मोटा बनता हैं। इसी शोषण की परम्परा पर व्यंग कसते हूए परसाई स्वयंम् को व्यंग का निशाना बनाकर अपने समय की पोल खोलते हैं।

"जब से अपने कपडे बनवाने का जिम्मा खुद लिया हैं, दर्जी से कहता हूँ - जरा घटते शरिर का बनाना। शरिर जब तक दूसरों पर लदा हैं तब तक मुटाता हैं। जब अपने ही उपर पड जाता हैं, तब दुबलाने लगता हैं।

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (दो छोटी इच्छाए), पृ.१०५।

जिन्हे मोटे रहना है, वे दूसरों पर लदे रहने का सुभीता कर लेते हैं।"[१]

आज के जमाने में ईमानदारी से मेहनत करके कोई मोटा नहीं बनता, जो भ्रष्टाचारी बनता है, दस-पाँच के पेट काटता है उसी का ही पेट बडा हो जाता है, इसलिए अब विश्वास नही होता कि आदमी आपनी मेहनत से ईमानदारी का पैसा कमाकर भी मोटा बन सकता हैं।

परसाई जी ने अपने ही माध्यम से लेखक की प्रतिष्ठा, सामाजिक गरिमा, राजनैतिक महत्व आदि बडी बडी बातो की वर्गो में बटे समाज में क्या असलियत हैं वह बताने का प्रयास उन्होने अपने आत्मव्यंग्य में किया हैं। धन को महत्व देनेवाले इस समाज में परसाई जी ने अपनी हैसियत बाजी के भ्रमों को तोडा हैं। दिल्ली के व्यवस्था में जिसकी अवस्था त्रिशंकु की तरह हैं, ऐसे केवल हरिशंकर परसाई ही नही हैं उनका संपूर्ण वर्ग हैं। वह वर्ग रोज भ्रम तोडता हैं, नये भ्रम पालता हैं, इससे उनकी जीवन के प्रति मजबूती और प्रतिबध्दता का ही एहसास होता हैं। अपना शोषण न होने देने के लिए और भी मजबूती से तनकर खडे रहने का प्रयास करते हैं। व्यवस्था का विरोध करने की ताकद परसाई के आत्म-व्यंग्य में पायी जाती हैं।

इस तरह हरीशंकर परसाई जी के साहित्य में व्यंग्य की विविधता दिखाई देती हैं।

---

१ "काग भगोड़ा", (बेईमानी की परत), पृ.४८।